मासिक—

मानव मन्दिर

संरक्षक :
परम दयाल पं० फकीरचन्द जी महाराज

सम्पादक :
सेठ दुर्गादासजी

२	नवम्बर १९७५	संख्या ६

सुन्दर प्यारा निजघर

लेखक :—

सेठ दुर्गादास साहिब चण्डीगढ़

सायंकाल है। सूर्य अस्त हो रहा है। अन्धेरा छा गया। सब पक्षी आकाश में उड़ने लगे। जमघट के जमघट इकट्ठे कभी इधर उड़ान कर रहें हैं और कभी इधर उड़ान कर रहे हैं। क्या अनोखा दृश्य है। देंखिये ! सब पक्षी अपने अपने घौसलों की तलाश में हैं। अपना अपना घर ढूंढ रहे हैं। देखो ! वह वृक्षों का झुंड सामने आ गया। लो, सब पक्षी वृक्षों की टहनियों पर बैठ गये। यह इनका घर है। अपने घर पर पहूंच कर सब खुश हैं। शान्त वातावरन है ! क्यों प्रसन्न न हों ? रात अराम से व्यतीत होगी। घर की यह अनोखी अकर्षन है। इसकी तुलना ससार भर में नहीं मिलेगी।

सब पशु, गायें और भैंसें जंगल में चर रही हैं, कुछ अराम कर रही हैं। कई हरी हरी घास खा

रही हैं, और कुछ जुगाली कर रही हैं। सायंकाल हुआ। इसी प्रकार घर बापिस होने का समय आ गया। बिना किसी संकेत के, बिना चरवाहे की आज्ञा के सब पशु उठ खड़े हुये, चल दिये। देखो ! इनका झुंड बन गया। बस्ती का रास्ता लिया। जंगल में ये सब आज़ाद थे। आज़ादी से घूमते फिरते और चरते थे। इनको ज्ञान है, अनुभव है कि घर पहूंचते ही इनके गले में रस्सा या संगल डाल दिया जायेगा। लेकिन फिर भी देखिये, किस जल्दी से, किस तेजी से और किस ख़ुशी से दौड़े जा रहे हैं। किस तेज़ी से इनका पांव उठ रहा है अपने घर की ओर। अपने घर की लगन इनको खिंचे जा रही है। यह है निजघर की लगन जो हर एक प्राणी के अन्तर मौजूद है। बस्ती समीप आ गयी। बस्ती की गली में प्रवेश हो गये। हर एक ने अपने अपने घर का रास्ता लिया, बिना किसी सहायक के, बिना मार्गदर्शक और बिना चरवाहे के सब अपने अपने स्थान पर पहूंच गये। इनको पता है कि वह इनका घर है। घर का प्रेम इनको यहां ले आया।

पांच बज गये। दफतर बन्द हो गये। कारखाना वालों ने कारखाने बन्द कर दिये। कई अधिकारी तो घड़ी की सूई पर आंख लगाये बैठे थे। जूंही घड़याल ने पांच की आवाज़ दी, सब अधिकारी, कलर्क, मज़दूर और उच्च अधिकारी दफतरों से बाहर निकले जल्दी से चल दिये। सबने अपने अपने घर का रास्ता लिया। सारे दिन के थके मान्दे, लेकिन पांव देखो कितनी तेजी से उठ रहा है। ऐसा क्यों न हो। सब खुश हैं। क्यों खुश न हो? अपने 'घर जाने की खुशी है। इसे निजघर कहते हैं। घर की लगन, घर का प्रेम, यहां पर आराम मिलता है।

जब सायं होती है मैं भी अपने घर का रास्ता लेता हूं। इसी प्रकार जब जीवन की सायं हो जाती है, इन्सान को निजघर का रास्ता ढूंढना चाहिए और निजघर जीते जी पहूंच जाये। वहाँ शान्ति है।

यह तो इस संसार की दशा है। सब संसारी अपने अस्थायी घर जो इसी संसार में है, इसको जाने की खुशी में फूले नहीं समाते। पक्षी, हैवान, इन्सान सबको अपने घर के सुख का अनुभव है। लेकिन जब प्राणी को अनुभव हो जाता है कि इसका

निजदेश निजघर और निजधाम और है, यह नहीं, तो अपने निजधाम की ओर पाँव उठाता है। इसको पाने का यत्न करता है। तो ऐसे प्राणी को इस संसारी घर में चैन नहीं मिलता। ऐसे प्राणी को कुछ साक्षातकार होना आरम्भ हो जाता है कि निजधाम क्या है।

जब नींद आती है तो सब प्रकार के बोध भान, काम क्रोध, लोभ, मोह और अहंकार दब जाते हैं। इस समय गहरी नींद में जीव प्रेम भूल जाता है। धन भूल जाता है। संसार भूल जाता है। बुद्धि जाती रहती है। ज्ञान भूल जाता है। शरीर की सुद्धबुद्ध नहीं रहती। यह नियम है। इस आनन्द को हर एक जीव सुषुप्ति में भोगता है। हर एक जीव यह आनन्द लेने के लिए विवश है। सब प्रकार की थकावट, उलझन और चिन्ता सुषुप्ति के आनन्द से दूर हो जाती है। प्राणी अपने आपको ताजा अनुभव करता है। बल की पुष्टि होती है। तेज बड़ता है। सुषुप्ति और समाधि में केवल होश का अन्तर है जैसे सुषुप्ति का आनन्द लेने के लिए हर एक प्राणी के अन्तर चाह रहती है। ऐसे ही यही चाह प्राणी

को अपने निजधर की ओर ले जाती है।

व्यक्ति संसार में आया आंख खुली, होश आयी, संसार दिखाई पड़ा। भोग भोगे। आनन्द लिए। संसार के सब काम किये। लेकिन दिल में कोई चाह बनी रही। पता न लगा कि वह क्या है। न जाने हुए इसको ओर पांव उठता रहा। कभी संतान में इसको ढूंडता रहा, कभी धन में, कभी स्त्री में और कभी काम में इसकी खोज की। कभी संसार और इनके भोगों से चिमटा रहा। सत्गुरु की दया और इनकी कृपा से चाह समाप्त हुई। मार्ग मिल गया। पता पा लिया कि किसी वस्तु की दिल में तलाश थी। वह थी अपने निजघर की। अपने घर चल गया। अब घर की तलाश जारी है।

क्योकि विश्वास हो गया कि घर पर आराम है, घर पर सुख है, घर में अनन्द है। इस घर में शान्ति है। लेकिन अफसोस प्राणी भूल से यह समझ वैठे हैं कि मरने के बाद या इस संसार से कूच के बाद इसकी आत्मा का उड़ान होगा। निजघर इस संसार से परे है।यह भूल है।

निजघर का पता सत्गुरु बताते हैं। इनके सत्संग से पता चलेगा कि हमारा निजघर कहां है। यह सब संसार का पसारा शब्द और प्रकाश से हुआ। हम सब शब्द स्वरूप हैं, प्रकाश स्वरूप हैं, हमारा आद शब्द है, शब्द हमारा निजघर है।

बच्चा पैदा हुआ। इसने शब्द नहीं किया, समझ लिया गया इसमें प्राण नहीं में। जब मानव का शब्द समाप्त हो जाता है, समझ लिया जाता है कि इसकी मृत्यु हो गई है। शब्द जब शरीर में आया, मन बन गया। मन मलोनी की दशा है। काम क्रोध, लोभ, मोह और अहंकार वजूद में आ गये। जीवन आरम्भ हो गया। सब खेल खूब खेले। अब घर की याद आ गयी तो उल्टा साधन कर दो। शरीर में रहते हुये अमन हो जाओ अर्थात मन न रहे। फिर क्या होगा सुरत सुरत मैं ठहर जायेगी। साक्षो के दर्शन होंगे, जो शब्द स्वरूप है। यह निजघर है। यहां द्वन्द नहीं है। सुख दुख के परे यह एक दशा है। जो महांपुरुष इस घर की सैर कर चुके हैं। इनका सत्संग करो, इनसे भेद लो और शब्द की कमाई करो। कबीर साहिब फरमाते हैं।

शब्द माहीं सुरत राखिये, तब पहूंचे दरबार।
कहैं कबीर तहाँ देखिये, बैठा पुरुष हमार॥
शब्द शब्द सब कोई कहे, वह तो शब्द विदेह।
जिभ्हा पर आवे नहीं, निरख परख करले
'सब को राधास्वामी'

व्यष्टि रूप में ईश्वर भक्ति ही सच्चा मानव धर्म है

सत्संग हज़ूर परम दयाल परम सन्त पण्डित फकीर चन्द जी महाराज, मानवता मन्दिर होशियारपुर

दिनाक 20 जुलाई 1975

'मासिक सत्संग'

राधास्वामी ! मैं अपनी आत्मा से पूछता हूं कि तुम यह काम क्यों करते हो ? किताबें लिखते हो और सत्संग कराते हो। क्यों ? सुनो मित्रो !

अदम से जानबे हस्ती तलाशे यार में आये।

हर एक वस्तु अपने असल की ओर खिचती है। लोहा चुम्बक की ओर खिचता है। फूल खिलता है तो वह चान्द की ओर खिचता है। ऐसे ही मैं भी अपने आदघर या मालिक की ओर खिचने के लिए

विवश हूं। यह मेरे वश की बात नहीं है। हर एक जीव जिस काम के लिए संसार में आया है वह उस ओर खिचा जा रहा है। स्वामी जी महाराज ने एक शब्द में लिखा है।

तू चुम्बक मैं लोह समानी।

जब बादल गरजता है तो मोर बोलता है। मैं बचपन से ईश्वर, परमेश्वर, राम और कृष्ण को मानने वाला था क्योंकि ब्राह्मण कुल में पैदा होने के कारण यह संस्कार मिला हुआ था। उस मालिक की तलाश के सिलसिले में मौज या मेरे कर्म एक दृश्य द्वारा हज़ूर दाता दयाल जी महाराज के चरण कमलों में ले गये। उस पवित्र विभूति ने मुझे सन्तमत की शिक्षा दी और सन्तों के इष्ट को ईश्वर, परमेश्वर राम कृष्ण, पारब्रह्म ब्रह्म सब से ऊंचा और सब से अलग बताया, जो कि मेरी समझ में नहीं आता था। सन्तों ने सब मत मतान्तरों और धर्मों को यहां तक कि वेदान्त को भी कालमत में बताया और सबका खण्डन किया। यह बाणियां पढ़कर मैं सोचा करता था कि मैं तो मालिक को मिलने निकला था यहां आकर कहां फंस गया, जहां मेरे पूर्वजों की निन्दा

की गयी है। क्योंकि हुजूर दाता दयाल जी महाराज पर पूर्ण विश्वास था और मैं उनको सर्वाधार का रूप मानता था। इसलिए मैं उनको तो छोड़ नहीं सकता था। इस वास्ते मैंने उस समय प्रण किया था कि इस मार्ग पर सच्चा होकर चलूंगा और जो मेरा अनुभव होगा, वह संसार को बता जाऊंगा। एक तो यह मेरा अपना ही कर्म है जो मैं यह काम करता हूं। दूसरे हम अपने ही विश्वास से किसी को कुछ मानकर उसके बन्धन में आ जाते हैं। जैसे आदमी एक स्त्री को अपनी पत्नी मानकर उसके वन्धन में आ जाता है। ऐसे ही मेरा भी हुजूर दाता दयाल जी महाराज पर पूर्ण विश्वास था। उन्होंने मुझे आज्ञा दी थो कि फकीर! चोला छोड़ने से पहले शिक्षा को बदल जाना। इसलिए मेरे इस काम को करने का यह उद्देश्य है। उद्देश्य ही नहीं बल्कि मैं इस काम के लिए घसीटा जा रहा हूं। I am being dragged मेरे वश की कोई बात नहीं है। अब हजूर दाता दयाल जी महाराज का एक शब्द सुनो :–

क्या है ईश्वर किसमें ईश्वर, है कहां रहता है वह।
करता क्या है धरता क्या है, और क्या करता है वह।

मैं ईश्वर को मिलने निकला था। मैंने सुना हुआ भी था और रामायण से भी यह संस्कार मिला हुआ था कि वह मालिक अपने भक्तों के लिए मानव चोले में आता है। हजूर दाता दयाल जी महाराज फरमाते हैं कि ईश्वर कहां रहता है क्या करता है और उसका पता कैसे लगता है :—

कुछ दिनों सत्संग हो, ईश्वर की तब आवे समझ।
जो समझता ही नहीं, भव सिंध में बहता है वह।

सत्संग में जाके ईश्वर की समझ को प्राप्त करो। जिसको यह समझ नहीं आती वह सारा जीवन इस संसार में रोता ही रहता है और दुख उठाता रहेगा। मैं अपने आप से पूछता हूं कि फकीर ! तुम लोगों को तो उपदेश करते हो लेकिन क्या तुमको ईश्वर की समझ आ गयी ? यदि तुमको यह समझ आ गयी है तो क्या तुम संसार में रोते नहीं हो ? सुनों ! भवसिंध का अर्थ है जीवन का समुद्र। जीवन के बोध भान अर्थात शरीर के बोध भान, मन के बोध भान और आत्मा के बोध भान जिसको ईश्वर की समझ नहीं आयी वह इन बोध भानो में बहता रहता है। मैं अपने आपसे कहता हूं कि

फकीर ! एक दिन मर जाना है, यदि हेराफेरी करोगे, किताबी ज्ञान बताओगे और अपना अनुभव नहीं बताओगे तो कहां जाओगे। ईश्वर की समझ मुझे आप लोगों से आयी। इसलिए इस आयु में मैं आप लोगों को गुरु मानकर आपको नमस्कार करता हूं। जो लोग मुझे गुरु मानते हैं, क्योंकि उन लोगों से मुझे ईश्वर की समझ आयी। इसलिए इस गुरु पूर्णमा पर मैं उनकी पूजा और सेवा करूंगा। आज तक किसी सन्त ने ऐसी सचाई नहीं बताई। हां ! इशारों में या सेन बेन में अवश्य कह गये।

शिष निवे गुरु को यह जाने सब कोय।
गुरु निवें शिष को, कोई बिरला ही होय।

मैं वह गुरु हूं जो आप चेलो को सिर निवाता हूं। क्योंकि आप लोगों के कारण मुझे ईश्वर का पता लगा। ईश्वर क्या है ? ईश्वर वह है जिसमें ऐश्वर्य है अर्थात शक्ति है। ईश्वर क्या करता है ? ईश्वर संसार को पैदा करता है। यह सारी सृष्टी ईश्वर की ही तो रचना है। तो जो बाहर का ईश्वर है वहां तक तो मेरी बुद्धि जाती नहीं है। कितने लोक लोकान्तर हैं। कितने सियारे, सितारे और लोक हैं। कहाँ कहां जा सकता हूं ? मेरे अन्तर में जो ईश्वर

की अंश है उसको मैंने जाना है। लोग कहते हैं कि वह घट घट का बासी है। इसलिए वह हमारे में भी है। ईश्वर क्या करता है ? रचना करता है। हमारे अन्तर में रचना करने वाली कौन सी शक्ति है ? वीर्य, जो बच्चे पैदा करता है। बच्चा अपने आप तो नहीं आ जाता। मां के रज और बाप के वीर्य से हमारी उत्पति होती है। इसलिए हमारे अन्तर में ईश्वर का स्थूल रूप हमारा वीर्य है। जो आदमी अनावश्यक अपने वीर्य का नष्ट करता है वह ईश्वर द्रोही है। ऐसे आदमी का क्या परिणाम होता है ? वह वहमी और भरमी हो जाता है और उसका मानसिक सतुलन ठीक नहीं रहता। मुझे क्योंकि हजूर दाता दयाल जी मराराज ने आज्ञा दी थी कि फकीर। चोला छोड़ने से पहले शिक्षा को बदल जाना। इसलिए मैं वह बात कहता हूं जो मेरे अनुभव में आयी है। लेकिन मुझे किसी बात का दावा नहीं है। जो आदमी अपने शारीरिक और मानसिक ब्रह्मचर्य का पालन करता है और सिवाय संतान पैदा करने के अपने वीर्य को नष्ट नहीं करता वह धन्य है। क्योंकि वह ईश्वर का काम करता है

और यदि कोई बिना कारण अपने वीर्य को नष्ट करता रहता है तो फिर क्या होता है? नवयुवक लड़के और लड़कियों को नाना प्रकार को बीमारियें लग जाती हैं। किसा का मस्तिष्क फेल हो जाता है और बहुत से विद्यार्थी परीक्षा में असफल रहते हैं।

ईश्वर का दूसरा रुप हमारे अन्तर क्या है? हमारा मन। हमारा मन मानसिक विचार का संसार बनाता है। मुझे इसका विश्शास कैसे हुआ? जब तुम लोग अपने विचार से मेरा रुप बना लेते हो और वह कई प्रकार से तुम्हारी सहायता करता है, दवाईयां बता देता है, सुरते चढ़ा देता है, बच्चे दे जाता है और मरते समय ले जाता है। इस विषय के मुझे प्रतिदिन सत्संगियों के पत्र आते हैं। क्योंकि मैं तो कहीं जाता नहीं और न ही मुझे ज्ञान होता है। इसलिए मैं हैरान होता हूं। दो दिन पहले उज्जैन से एक महिला का पत्र आया। उसने १०१ रु. भी भेजा। उसने लिखा है कि कुछ वर्षों से मेरी टाँग में पीड़ा थी और इसके कारण मुझे कष्ट था। मेरे अन्तर आपका रुप प्रकट हुआ और मेरी टाँग पर हाथ फेरकर कहा कि तू अब ठीक है। बाबा जी!

आपकी दया से हमको सब कुछ मिला और हम सुखी हैं। अब दया करके हमको अन्तिम अवस्था पर पहूंचा देवें।

पहले तो मैं उस स्त्री को जानता भी नहीं था। अब भी उसको शकल से तो नहीं जानता लेकिन पत्र व्यवहार से पता चला है कि उसके साथ यह घटना घटी है। अब मैं अपने आप से पूछता हूं कि क्या तू उसके अन्तर गया था ? नहीं ! मैं नहीं गया तो फिर ईश्वर का दूसरा रुप क्या है ? व्यक्ति की वासना, इच्छा और संकल्प। जैसी आसा वैसी वासा। जैसा ख्याल वैसा हाल। जैसी करनी वैसी भरनी और जैसी मति वैसी गति। इसलिए यदि कोई आदमी इस संसार में सुखी रहना चाहता है और भवसागर में बहना नहीं चाहता तो उसको चाहिए कि अनावश्यक अपना वीर्य नष्ट न करे, अपना संकल्प, अपना विचार और अपनी वासना अच्छी रखे। यही वेदमार्ग है, "शिव संकल्पं अस्तु"। हम को ईश्वर के रुप का पता नहीं इसलिए हम उट पटांग सोचते रहते हैं और दूसरों के साथ शत्रुता, घृणा द्वेष इर्ष्या रखते हैं और चार सौ बीस करते हैं।

हमारे यही विचार हमारे लिए दुख का कारण बन जाते हैं। इसी प्रकार यदि हम अच्छे विचार रखते हैं और दूसरों से सच्चे दिल से प्रेम प्यार रखते हैं और सबका भला चाहते हैं तो ये हमारे सुख का कारण बन जाते हैं। दूसरों के लिए अच्छे या बुरे बिचार जो हम अपने मन में रखते हैं। उनका प्रभाव दूसरों पर हो या न हो मगर हम पर अवश्य होगा। आप लोग मेरे पास सत्संग के लिए आये हैं। मैं हूं समय का सन्त सत्गुरु। मुझसे कुछ ले जाओ। हजूर दाता दयाल जी महाराज ने मेरे बारे में लिखा था।

तू तो आया नर देही में, धर फकीर का भेसा।
दुखी जीव को अंग लगाकर लेजा गुरु के देसा॥
तीन ताप से जीव दुखी हैं, निबल अबल अज्ञानी।
तेरा काम दया का भाई, नाम दान दे दानी॥

प्रकृति ने मुझे ऐसा बनाके भेजा है। मैं जो बचन कहता हूं यही मेरा नामदान है। मैं कमरे में बन्द करके किसी के कान में मन्त्र नहीं देता। जो कान में मन्त्र देते है उनके बारे कबीर साहिब क्या फरमाते हैं।

दै परचे स्वामी ह्वै बैठे, करें विषय ब्यैहारा।

जब किसी आदमी को अन्तर में कोई मिल ६ तो वह अहंकार में आ जाता है और ऐसी घटनाओं से अनुचित धन मान प्रतिष्ठा लेते हैं। यहाँ सन्त कृपालसिंह जी महाराज का एक चेला अमृतसर से आया हुआ है। जब पिछले साल सन्त कृपाल सिंह जी चोला छोड़ गये तो इस चेले को बहुत दुख हुआ और यह बहुत उदास हो गया। इसके साथ ऐसा क्यों हुआ ? क्यों कि इसको गुरु के रूप को समझ नहीं थी। देखो ! कोई गुरु के मरने पर रोया और कोई बेटे के मरने पर रोया। क्या अन्तर है ? इसने मुझे पत्र लिखा और मेरी बहुत प्रशंसा की, कि बाबा जी ! आपका रूप मेरे अन्तर आया और बहुत बातें की और अन्त में मुझे कहा कि मेरे पास होशियारपुर में आ जाओ। इस प्रकार की घटनायें परचे कहलाते हैं। मेरे स्थान पर यदि और कोई गुरु होता तो इसको लूट के खा जाता लेकिन मैंने इसको क्या उत्तर दिया ? भाई ! मैं तुम्हारे अन्तर नहीं गया। यह सब तेरे अपने मन का खेल है। मेरे पास आने की कोई अवश्यकता नहीं हे, मैं अमुक तिथी को अमृतसर आऊंगा मुझे वहां मिल लेना।

भजन भेद एक और ही वस्तु है। कबीर साहिब का एक शब्द सुनो :–

साधो भजन भेद है न्यारा ॥
का माला मुद्रा के पहिरे, चंदन घसे लिलारा।
मूंड़ मुड़ाये सिर जटा रखाये, अंग लगाये छारा।

यह जितने भी नाम धारी हैं चाहे वे किसी भी धर्म मत या फिरके के हैं, सबका पहरावा अलग २ है। कोई जटाजूट रखता है, कोई मूंड़ मुंडाके रखता है। कोई पास में डन्डा रखता है, कोई वैरागन रखता है, किसीके भगवे कपड़े हैं और कोई नंगे रहते हैं। क्या इस भेस में भक्ति भाव है ? नहीं।

का पानी पाहन के पूजे, कंदमूल फरहारा
कहा नेम तीरथ ब्रत कीन्हें, जो नहीं तत्व विचारा।

तत्व क्या है ? तत्व वह है जो सृष्टि को रचता है। जबतक किसी को यह ज्ञान नहीं कि यह सृष्टि कैसे बनती है और कैसे बिगड़ती है, वह चाहे हज़ारों चेले बना ले या जितनी इच्छा गद्दियां बना ले या कोई स्वांग बना ले, वह लक्षपद को प्राप्त नहीं कर सकता और उसको शान्ति नहीं मिल सकती। उसमें अहंकार आ जायेगा कि मेरे हज़ारों चेले हैं, मैं महात्मा हूं और लोग मुझे मत्था टेकते हैं।

का गाये का पढ़ि दिखलाये, का भरमे संसारा।
का संध्या तरपन के कीन्हे, का षट कर्म अचारा।

लोग क्रिया कर्म करते हैं। नाना प्रकार के कर्म धर्म करते हैं। यद्यपि ये कर्म बुरे नहीं और अच्छे हैं लेकिन यदि कोई यह चाहे कि इस कर्म धर्म से वह लक्ष्यपद को प्राप्त हो जायेगा तो यह ग़लत है। लोग मन्दिरों में, गुरद्वारों में या अकेले बैठ कर मालिक की स्तुति के भजन गाते हैं। गाने वाले और सुनने वाले भी मस्त हो जाते हैं। वे यह समझते हैं कि गाना ही सब कुछ है।

जैसे बधिक ओट टाटी के, हाथ लिये विख चारा।
ज्यों बक ध्यान धरै घट भीतर, अपने अंग विकारा।

जिस प्रकार कसाई बकरे को खूब खुराक देता है, ताकि यह मोटा हो जाये और उसको इसके मांस से अधिक पैसा मिले। कबीर साहिब कहते हैं कि ऐसे ही काल जीवों को पालता है। यह केवल कबीर साहिब ही नहीं कहते, मेरा भी यही अनुभव है। यदि मेरा अनुभव यह न होता तो मैं कबीर साहिब की बात को कभी न मानता। हम दान पुण्य करते हैं और कई प्रकार के कर्म करते हैं। इन कर्मो से

क्या होगा ? अच्छे कर्म से तुम में अच्छाई और बूरे कर्म से बुराई आयेगी। तुम अच्छाई और बुराई के चक्कर में ही रहोगे और इस चक्कर को समाप्त नहीं कर सकोगे। जो फल लेने के लिए दान करता है उसको उसका फल भोगने के लिए जन्म लेना पड़ेगा। जैसे कसाई बकरे को ख़ुराक देता है। ऐसे ही यह कर्तापुरुष भी जीवों को धर्म कर्म में लगाता है। तुमको इससे अच्छे जन्म भी मिलेगे, अफसर भी बन जाओगे, मनिस्टर भी बन जाओगे, प्रधान मन्त्री और राष्ट्रपति भी बन जाओगे लेकिन चक्कर से नहीं निकल सकोगे। यदि मैं स्वांग बनाके बैठ जाऊं, दाढ़ी बढ़ा लूं तो लोग मुझे गुरु या महात्मा समझेगें और मुझे मान प्रतिष्ठा और धन देगें। ऐसे ही आजकल बहुत से ऐसे हो गुरु हैं। लोगों के अपने विश्वास के कारण गुरुओं के रुप उनके अन्तर प्रकट होते हैं। फिर वे अपने चेलों से अपना ढंढोरा पिटवाते हैं कि महात्मा जी इंगलैंड या अमेरिका में प्रकट हुये, यहां प्रकट हुये यह कह गये, वहां प्रकट हुये और यह कह गये आदि। लेकिन मैं कैसे मानूँ कि कोई गुरु किसी के अन्तर

जाता है जब मुझे प्रतिदिन इस प्रकार के पत्र आते हैं और मैं शपथपूर्वक उनको कहता हूं कि भई! मैं तुम्हारे अन्तर नहीं गया और न ही मुझे कोई पता है। ये गुरु लोग मेरे सामने मानते हैं कि हम नहीं जाते लेकिन पब्लिक को यह बात नहीं बताते। क्योंकि धन नहीं आता। इसलिए कबीर साहिब ने ठोक कहा है कि यह बगलेभक्त हैं। बाहर में तो बगला एक भक्त लगता है लेकिन उसकी नीयत मच्छली को खाने की होती है।

दै परचे स्वामी ह्वै बैठे, करै विषय व्योहारा।
ज्ञान ध्यान को मरम न जानै, बाद करै निःकारा॥

जिस प्रकार इस अमृतसर वाले आदमी के अन्तर मेरा रुप प्रकट हुआ, अब यदि मैं इसको सच्ची बात नहीं बताता और अपने जाल में फंसाता हूं तो यह और भी दस बीस या सौ पचास आदमियों को मेरे पास लायेगा। फिर मेरा यह काम अपने जन्म को बिगाड़ना होगा। आजकल गुरुलोग क्या करते हैं? दूसरों की निन्दा ओर अपनो प्रशंसा करते हैं। ऐसे ही डाक्टरों और दुकानदारों की दशा है। वे भी द्वैष के कारण ऐसा ही करते हैं। ऐसे ही हम गुरुओं

की दशा है। अपनी विधि ठीक और दूसरों की विधि गलत बताते हैं। ऐसे जो गुरु हैं वे सचाई से बहुत दूर हैं। हर एक आदमी को उसकी नीयत का फल मिलता है। हमने अपने मन को एकाग्र करना है, कोई राम राम से करे, कोई कृष्ण नाम से करे, कोई अल्ला अल्ला कहकर करे, कोई राधास्वामी नाम से करे। किसी भी नाम से कोई करे, तात्पर्य तो मन को इकट्ठा करने से है। गुरुओं के इसी बात पर झगड़े हैं। अपने आपको ठीक और दूसरों को गलत बताते हैं। लेकिन उनको असलियत का पता नहीं। मेरे पास लोग आते हैं। मैं उनसे यह कहा करता हूं कि तातपर्य तो मन को शुद्ध रखने, एकाग्र करने और असलियत को जानने से है। जिस नाम से तुम्हारी इच्छा करे उससे करो। इसमें झगड़ा किस बात का ? मैं किसीको बुरा क्यों कहूं ? यदि तुमलोग सच्चे हो तो प्रकृति अपने आप तुमको मंजिल पर ले जायेगी। मुझे ले गयी। मेरे अन्तर बचपन से सचाई थी। इसलिए प्रकृति ने मेरा प्रबन्ध कर दिया। तुम सच्चे बनकर मालिक से अपने अन्तर में मांगो, प्रकृति तुमको देगी। मैं किसी मतमतान्तर का आदमी नहीं हूं। मेरा धर्म

Universal है। किसी भी नाम से मन को इकट्ठा करो। असली वस्तु तो तत्व विचार है और तत्व विचार यह है कि सृष्टी कैसे बनती है और कैसे बिगड़ती है।

क्या है ईश्वर किसमें ईश्वर. है कहाँ रहता है वह।

वे जो बड़ा ईश्वर है। उसका तो मुझे पता नहीं लगता। मेरे अन्तर में जो ईश्वर है उसकी मुझे यह समझ आयी है कि हमारे शरीर से जो वीर्य है क्योंकि वह संतान पैदा करता या उससे उत्पति होती है। इसलिए हमारे अन्तर वह ईश्वर का स्थूल रूप है। ईश्वर का दूसरा रूप हमारे अन्तर में हमरा मन है। क्योंकि ईश्वर ही रचना करता है और हमारा मन भी मानसिक रचना करता है, इसलिए ईश्वर का सूक्षं रूप हमारे अन्तर में हमारा मन है। यदि मन में अच्छे संक्ल्प रखोगे तो तुम्हारा संसार भी अच्छा बनेगा और तुम सुखी रहोगे और यदि तुम्हारे संकल्प अच्छे नहीं होंगे तो तुम्हारा संसार भी अच्छा नहीं होगा और तुम दुख उठाओगे और दुखी रहोगे। यदि वेदमार्ग है "शिव संकल्पं अस्तु" कल्याणकारी विचार रखना ही

सनातन धर्म की या हिन्दूओं की Philosoyhy है। आजकल तो हिन्दू, मुसलमान, सिख, इसाई सब नाममात्र हैं। आजकल तो Smuggling, दोहरे हिसाब किताब, टेक्स की चोरी और आपसी झगड़े ज़ोरों पर हैं। कौन है धर्म पर चलने वाला ? शायद ही कोई होगा। क्या कहूं लोग एक ओर तो अहिंसा परमोधर्मा के अनुयायी हैं और दूसरी ओर मांस और शराब प्रयोग करते हैं। तन्द नहीं, आजकल तो तानी ही बिगड़ी हुई है।

कल श्री गुलाज़री लाल जी नन्दा का पत्र आया वे लिखते हैं कि आप मानव धर्म पर लेख भेजें। मानव धर्म क्या है ? सब धर्म उस ईश्वर को या खुदा को मानते हैं। मगर वह है क्या ? ईश्वर या खुदा को जानना ही सब से पहला धर्म है। हमलोग ईश्वर या खुदा की रट लगाते हैं। लेकित असलियत का किसीको पता नहीं। लोग कहते हैं कि ईश्वर का जाप करने से आदमी के दुख दूर हो जाते हैं, आदमी की मनोकामनायें पूरी हो जाती हैं और धनवान हो जाता है। मैं पूछता हूं कि जो ईश्वरभक्त सारा जीवन ईश्वर को भक्ति करते रहे, इनके साथ क्या

बीती ? क्या इनको दुख नहीं हुआ ? हुआ । इनको नाम जपने की विधि का पता नहीं । सब से पहले उस ईश्वर की भक्ति करो जो तुम्हारे अन्तर में है अर्थात शारीरिक मानसिक ब्रह्मचर्य रखो। इसका यह भाव नहीं कि स्त्रियों को छोड़ दो या स्त्रियें मरदों को छोड़ दें । अनावश्यक ब्रह्मचर्य को नष्ट मत करो और अपने विचार शुद्ध रखो। ईश्वर का तीसरा रुप क्या है ? विज्ञान भी सिद्ध करता है और हमारी बुद्धि भी मानती है कि यदि सूर्य की रोशनी और गर्मी न हो तो कोई वस्तु पैदा नहीं हो सकती । इस लिए ईश्वर का तीसरा रुप Light (रोशनी-प्रकाश) है। उसी का नाम ज्योतीस्वरुप है । तो जो आदमी ईश्वर परायण होना चाहते है उनको तीन काम करने पड़ेंगे ।

१. शारीरिक ब्रह्मचर्य रखना । इसका यह अर्थ नहीं कि तुम शादी न करो। जिसकी समय पर शादी नहीं होती उसके किसी न किसी रोग में ग्रस्त होने की सम्भावना रहती है ।

२. शिव संकल्पं अस्तु। अच्छे विचार रखना। किसीके साथ ईर्ष्या द्वेष घृणा शत्रुता न रखना और सब से प्रेम करना।

३. अपने अन्तर में प्रकाश का साधन करना। यही गायत्री मन्त्र है।

ईश्वर के तीन रुप जो हमारे अन्तर में हैं, वह मैंने तुमको बता दिये। उस बाहर के ईश्वर का तो किसीको कोई पता नहीं लग सकता। क्योंकि वह तो बेअन्त है। जो इन तीन बातों पर अमल करता है, वह संसार में इतना ज्यादा दुखी नहीं होता जितना कि हम लोग साधारणतयः दुखी होते हैं। यही मानव धर्म है और यह धर्म किसो विशेष जाति धर्म या पंथ का नहीं है। यह सब मानव जाति का है। आप लोग सत्संग में आये हैं। मैं सत्संग कराने से पहले अपने आपसे यह प्रश्न करता हूं कि फकीर! क्यों यह पाखण्ड का जाल बना रखा है। इससे क्या लाभ किसीको लाभ हो या न हो। मगर मेरा यह अपना कर्म है : हजूर दाता दयाल जी महाराज ने आज्ञा दी थी कि फकीर! चोला छोड़ने से पहले शिक्षा को बदल जाना। इसलिए जो मेरी समझ में आया वह

मैंने कहा ओर हज़ूर दाता दयाल जी महाराज की आज्ञा की पालना की। मैं अपने कर्म मैं घसीटा जा रहा हूं। तुम्हारी इच्छा हो सुनो या न सुनो और मानो या न मानो :—

कुछ दिनों सत्संग हो, ईश्वर की तब आवे समझ !
जो समझता ही नहीं, भव सिंध में वहता है वह ॥

यह तो हजूर दाता दयाल जी महाराज को पता होगा कि वह सत्संग में लोगों को क्या बताना चाहते हैं और उन्होंने सत्संग का सिलसिला क्यों आरम्भ किया था। लेकिन एक बार उन्होंने मुझे लिखा था कि फकीर ! सत्संग कराना भो एक उपाधि है। तीन चार सौ आदमी मुझे हर समय घेरे रहते हैं। यह ठीक है कि हजूर महाराज ने मुझे सत्संग कराने की आज्ञा दी थी। लेकिन इच्छा मेरी भी थी। देखो कब तक काम चलता है। तो यही इच्छा मेरी थी कि अपना अनुभव कह जांऊगा। यह मेरा कर्म है। अब इसको भोग रहा हूं। ऐसे ही हजूर बाबा सावन सिंह जी महाराज और हजूर दाता दयाल जी भी अपना अपना कर्म भोग कर चले गये। हरएक आदमी किसी न किसी उदेद्श्य के लिए काम करता है।

तुम देखो कि एक मकान को आग लग गयी है। उसके अन्तर एक बच्चा चिल्ला रहा है। एक आदमी अपने आपको विपत्ति में डालकर बच्चे को अन्तर से निकालकर ले आता है। वह किसी पर उपकार नहीं करता। उसके मस्तिष्क में यह बात थी कि यदि मैं बच्चे को निकालकर ले आऊंगा तो उसकी जान बच जायेगी और मेरे लिए यह एक शुभ काम होगा और लोग मेरी प्रशंसा करेगें। ऋषि याज्ञ वल्कय ने लिखा है कि पुत्र पुत्र के लिए प्यारा नहीं बल्कि आत्मा के लिए प्यारा है। हम सब कुछ अपने ही लिए करते हैं। देखो! तुम स्त्री से या अपने वच्चों से प्रेम करते हो। लेकिन यदि वे तुम्हारी इच्छा के विरुद्ध चलते हैं तो तुम उन से घृणा करने लग जाते हो। इसलिए जो कुछ भो कोई करता है। मैं जो कुछ करता हूं, यह भी अपने ही आत्मा के लिए करता हूं।

तुमने कब समझा उसे, और कैसे आई यह समझ।
अन समझ दुख अग्नि में, संसार के दहता है वह।

मैंने ईश्वर को क्या समझा और कैसे समझा? यह समझ मुझे आप लोगों से आयी, लेकिन दया

हजूर दाता दयाल जी महाराज की है। मैं मूर्ख था, अज्ञानी था और भावुक था मगर प्रेमी अवश्य था। जिस तरह छोटे बच्चे को समझ नहीं होती और वह अपनी माता के साथ लिपटता है और जब उसको समझ आ जाती है फिर वह ऐसा नहीं करता, मगर अपनी माता का उपकार मानता है और उससे प्रेम करता है। ऐसे ही मैं भी अज्ञानी था। हजूर दाता दयाल जी महाराज के चरणों में गया। उनका कृतज्ञ हूं कि उन्होंने मुझ सम्भाला। कभी मुझे मूर्ख और अज्ञानी नहीं कहा बल्कि सदा मुझे उत्साह दिया और जिस वस्तु की मुझे आवश्यकता थी वह मुझे दे दी। जिसको संसार की समझ नहीं है, वह संसार में बह जाता है। इस समय देखो जिन्होंने Smuggling से या अनुचित डंग से धन कमाया हुआ है, उनकी क्या दशा है।

कर्म प्रधान विश्व कर राखा, जो जस कोन तैसो फल चाखा

हजूर दाता दयाल जी महाराज ने शिक्षा को बदलने की आज्ञा दी थी। क्या शिक्षा बदलूं ? कहे जाता हूं कि यदि तुम्हारा शारिरीक और मानसिक

ब्रह्मचर्य ठीक नहीं है और तुम प्रकाश के साधक नहीं हो तो तुम संसार में सुखी नहीं रह सकता, चाहे बाबे फकीर के चेले बन जाओ, चाहे हज़ूर बाबा साबन सिंह जी महाराज के चेले बन जाओ, चाहे किसी और गुरु के चेले बन जाओ, संसार भूला हुआ है। सन्तमत की समझ नहीं है। किसी को क्या कहूं मैंने स्वयं नहीं समझा था। एक महांपुरुष के दो लड़के थे और दोनों ही आज्ञाकारी नहीं थे। एक महात्मा का लड़का दस नम्बर का बदमाश था। एक परमसन्त के भाई ने सारी सम्पति सट्टे में नष्ट कर दी। यदि इन महापुरषों में कोई शक्ति थी तो इनकों सीधे मार्ग पर ले आते। लेकिन कुछ न कर सके। क्योंकि तुम लोगो को सच्चाई का पता नहीं, इसलिए लुटे जा रहे हो। इस दशा को देखकर में शिक्षा बदले जा रहा हूं कि ऐ मानव! अपने विचार को शुद्ध रख अन्यथा तू लाख अभ्यास करता रह या गुरु के पांव दबाता रह, तुमको कोई लाभ नहीं होगा। केवल एक अस्थायी आनन्द मिलेगा। ऐ भोले भाले लोगो! अज्ञान में आकर मत लूटे जाओ। लेना देना संसार का व्यवहार है। जो देता है उसीको मिलता है।

हमने दिया हुआ है इसलिए हमको मिलता है । एक बार ज़िला अलीगढ़ में कृषक जी के मकान पर मेरा सत्संग था । उन्होंने स्टेज बहुत सुन्दर बना रखी थी। सत्संग में पांच सन्यासी भी आये। संघासन को देख कर उनके दिल में ईर्ष्या पैदा हो गयी । मैंने कहा कि क्यों नराज़ होते हो महात्मा जी । मैंने भी संघासन चांदी के हुक्के ओर सोने के ताज बनाके भेंट किये हुये हैं, इसलिए मुझे मिल रहे हैं । मान दोगे मान मिलेगा, धन दोगे धन मिलेगा और घृणा करोगे तो घृणा होगी । यह संसार का व्यवहार है और प्रकृति का नियम है ।

जितनी जल्दी हो सके, संगत करो संगत करो।
जिसको सत संगत नहीं, आपत विपत सहता है वह ।

जिसको सत्संग नहीं मिलता उसको सच्ची समझ प्राप्त नहीं हो सकती और वह संसार के झमेलों में आके दुखी हो जाता है । सच्ची समझ किसी पूर्ण पुरुष के सत्संग से मिलती है। यदि तुमको सच्ची समझ मिली हुई है तो दुख के समय तुम इस समझ के कारण उस दुख को महसूस नहीं करोगे ।

बिन सत्संग विवेक न होई, राम कृपा बिन सुलभ न सोई ।

संसार ने सत्संग को एक तमाशा समझा हुआ है। बहुत से लोग तो सत्संग में रौनक देखने या एक दूसरे को मिलने मिलाने के लिए जाते हैं। क्या मिलेगा उनको ?

तुम लोग आये हो। यदि मेरी बात पर अमल नहीं करते तो व्यर्थ अपना समय गंवाते हो। स्वामी जी महाराज ने अपनी बाणी में लिखा है।

सब ही आये सतगुरु आगे, दरस न पकड़ा बचन न लागे।
कहो अस सतसंग से क्या फल पाया, वक्त गया और जन्म गंवाया.

तुम लोग मेरे सत्संग में आये हो। यह तुमको पता होगा कि किसलिए आये हो। मैं क्यों सत्संग कराता हूं ? एक तो अपना कर्म भोगता हूं। दूसरे मेरे दिल में यह इच्छा रहती है कि मेरे पास जो कोई आता है वह सुखी हो जाये। इसलिए उसको अपनी समझ के अनुसार ठीक मार्ग बता देता हूं और शुभ भावना देता हूं। सवाय इसके मेरे पास और कुछ नहीं है। जिसकी इच्छा करे मेरे सत्संग में आये, जिसकी इच्छा न करे न आये। यदि कोई समझता है कि मेरी शिक्षा से लोगों को लाभ पहूंचता है तो जो उसकी इच्छा करे मानवता

मंदिर की सहायता करे। लेकिन मैं पाखण्ड की गुरुआई नहीं करना चाहता और न ही तुम लोगों की आंखों में मिट्टी डालकर तुमसे धन लेना चाहता हूं। मंदिर चले या न चले। सचाई मेरा मिशन है। हजूर दाता दयाल जी महाराज का एक शब्द है।

तू सच्चा है मुझे सचाई बख्श, बक्श सतगुरु प्यारे।
तू प्रकाश है तेरी दया से, प्रगटे घट रवि शशि तारे।

मुझे इस गुरुपने से क्या लेना है। मैं एक सच्चा इन्सान हूं। यदि तुम यह समझते हो कि जो कुछ मैं कहता हूं, यह ठीक है तो इसपर अमल करो तब तुमको लाभ होगा। जीव की प्रकृति को देखकर उसको शिक्षा दी जाती है। बच्चे के लिए और शिक्षा है, नौजवानों के लिए और है, बूढ़ो के लिए और, स्त्रियों के लिए और शिक्षा है।

तू दाता है दान दे मुझको, नाम रतन धन का स्वामीं।
मेरे मन में आके समाजा, जो तू है अन्तरयामी।।
तू है ज्ञान ज्ञान मुझको दे, मेट तिमिर अज्ञान मेरा।
तेरे रुप का दर्शन पाऊं, दिन प्रतिदिन रहे ध्यान तेरा।।
तू सत है अपनी सता दे, जीवन मेरा सुधर जावे।
तू चिन है निश्चलकर चित को, निश्चल ज्ञान मुझे भावे।।

तुरन्त विचार आता है कि फकीर! क्या तूने उसके रुप के दर्शन पा लिए? ऐ संसार वालो। एक सत्यप्रिय व्यक्ति की आवाज़ को सुनो। मैंने उसके रुप को क्या समझा। यह बताना चाहता हूं। जबसे मुझे यह पता लगा कि मेरा रुप लोगों के अन्तर प्रकट होता है और उनके अनेक प्रकार के काम कर जाता है। लेकिन मैं नहीं होता और न ही मुझे कोई पता होता है। मैं क्योंकि मालिक को मिलने निकला था। ईश्वर के रुप का तो मुझे पता लग गया, तो फिर मैं मन के सब विचारों को छोड़ कर आगे जाता हूं। आगे है प्रकाश और शब्द। जब वहाँ जाता हूं तो जो वस्तु मेरे अन्तर में प्रकाश को देखती है और शब्द को सुनती है, उसकी तलाश करता रहता हूं कि वह क्या है। उसका मुझे अन्त नहीं मिलता। तो फिर मालिक का रुप क्या हुआ?

अकह, अपार, अगाध, अनामी।

उसके बारे कोई कुछ नहीं कह सकता। प्रकाश और शब्द की थाह तो मिल गई, rारंग, सारंग, मुरली, बीन की थाह मिल गई, गुरुस्वरुप को देख

लिया। लेकिन उस वस्तु का पता नहीं लगता जो इन सबको देखती और सुनती है, वह अकह, अपार अगाध और अनामी है। यदि इससे ज्यादा किसीने कुछ और देखा हो तो मुझे पता नहीं। लोग कहते हैं कि अन्तर में हजूर बाबा सावन सिंह जी को देखा, कोई कहता है कि बाबे फकीर को देखा, कोई कहता है कि राम या कृष्ण को देखा। जब मेरा रुप लोगों के अन्तर प्रकट होता है और मैं नहीं होता तो कैसे मानूं कि हजूर बाबा सावनसिंह जी महाराज या कोई और गुरु किसीके अन्तर आता है। इससे सिद्ध हुआ कि वह जो रुप अन्तर मैं प्रकट होता है वह मालिक नहीं है, वह तो तुम्हारे ही विश्वास का बनाया हुआ रुप है। मालिक का रुप वह है जो हमारे अन्तर में प्रकाश को देखता है शब्द को सुनता है और इन सब का साक्षी है। सबने उसको बेअन्त कह दिया। अब मेरा यही अभ्यास है। तो जीवन व्यतीत करने का उपाय क्या है? ईश्वर के नियम को Follow करते हुये जोवन व्यतीत करना। जो आदमी जिस देश में रहता है, यदि वह उस देश के नियमों का पालन नहीं करता, वह दोषी है। इस समय जिन्होंनें

नियम को डोड़ा हैं वे जेल में है। ईश्वर का नियम क्या है? शारीरिक और मानसिक ब्रह्मचर्य को रखना और प्रकाश का साधन करना। इस लिए इस संसार के ईश्वर के नियमानुसार चलो। जो नियम को तोड़ता है उसको दण्ड मिलता है। मैंने तो यह समझा है। कबीर साहिब ने मालिक के बारे लिखा है कि वह फूल की सुगन्ध से भी पतला है। वह एक शब्द में लिखते हैं :–

ऐसा लो तत ऐसा लो, मैं केहि बिधि कथौ गंभीरा लो।
बाहर कहौं तो सतगुरु लाजै. भीतर कहौं तो झूठा लो।
बाहर भीतर सकल निरतंर, गुरु परतापै डीठा लो।
दृष्टि न मुष्टि न अगम अगोचर, पुस्तक लिखा न जाई लो।
जिन पहिचाना तिन भल जाना, कहे न को पतियाई लो।
मीन चलै जल मार्ग जीवें. परम तत्त धौं कैसा लो।
पुहुप बास हूं तें कछु झीना, परम तत्त धौं ऐसा लो।
आकासे उडि गयौ बिहंगम पाछे खोज न दरसी लो।
कहैं कबीर सतगुरु दया ते, बिरला सतपद परसी लो।

जिस प्रकार मछली पानी की आबशार में ऊपर को जाती है ऐसे ही हम लोग अन्तर में शब्द की धुन को पकड़कर ऊपर को जाते है। इस को वही जानता है जो इस मार्ग पर चलता है। मैंने

प्रण किया था कि इस मार्ग पर सच्चा हो कर चलूंगा और जो मेरा अनुभव होगा वह संसार को बता जाऊंगा। मगर मुझे कोई दावा नहीं कि जो कुछ मैंने कहा है यही ठीक है मगर मैं एक सत्यप्रिय व्यक्ति हूं। यह काम करना भी किसी पर मेरा कोइ उपकार नहीं है। यह मेरी वासना थी। हज़ूर दाता दयाल जो महाराज की आज्ञा थी की शिक्षा को बदल जाना। यह शिक्षा जो मैं दे रहा हूं, कही तो संतों न भी, मगर सैन बैन में कही। वह समय और था अब अपना राज है। यदि मेरी यह शिक्षा लोगों की समझ में आ जाये तो हमारा धार्मिक पक्षपात दूर हो सकता है।

तू सत है अपनी सत्ता दे, जीवन मेरा सुधर जावे।
तू चित है निश्चल कर चित को, निश्चल ज्ञान मुझे भावे।
सतचित आनन्द रूप है तेरा, दे अनान्द मुझे सतगुरु।
नाम रूप के तेरे सहारे, जीते जी जाऊं सतपुरु।

जब यह शब्द सुनता हूं तो अपने आपसे पूछता हूं कि क्या तूने सतपुर देखा हैं ? पता नहीं जो सतपुर मैंने देखा है वह ठीक है या नहीं है। सतपुर हमारी वह अवस्था है जहां हमको शरीर और मन की होश नहीं रहती। केवल हमको वहां अपनी

चेतनता का भान रहता है और वहां प्रकाश और शब्द है। सन्तों का शायद कोई और सतपुर हो तो मुझे उसका पता नहीं है। क्योंकि हमको संसार का विचार रहता है। इसलिए जब हम अपने अन्तर में सतपुर की अवस्था को देखते हैं तो इस विचार के अनुसार कि "जो पिण्डे सो ब्रह्मण्डे" हम यह सोचते हैं कि बाहर में भी ईश्वर के या मालिक के जगत के परे कोई ऐसी अवस्था होगी जहां के प्रकाश और शब्द होगा और होना भी चाहिए। जब हम बसरेबगदाद में रहा करते थे तो पुरुषोत्तम दास मुझसे कहा करते थे कि मास्टर जी ! हमको भी कुछ बताईये और मैं कहा करता था कि यदि पहुंच गया तो बताऊगा। अब मुझे यह पता नहीं कि मैं पहुच गया हूं या गिर गया हूं। मुझे किसी बात का कोई दावा नहीं। मैं सत्यप्रिय व्यक्ति हूं। जहांतक हो सका सच्चाई का व्यवहार किया और सचाई का साधन किया। किसी से हेराफेरी, धोखा फरेब नहीं किया, किसी से शत्रुता नहीं रखी और न ही अब है। बचपन में काम का अंग अवश्य रहा और वह भी अपने घर में। जीवन में मैंने और कोई पाप नहीं किया।

राधास्वामी परमपुरुष करतरा, तू दुखियों का सहारा है।
दुख दरिद्र को मेट दे मेरे, दुखदाई संसारा है।

ज्ञान और समझ से हम दुखों से छुटकारा पा सकते हैं और दूसरे हमारी वृत्ति के शरीर और मन को छोड़कर प्रकाश और शब्द ने ठहरने से हम अपने दुखों को मेट सकते हैं गहरी नींद में हमको दुख का पता नहीं होता। ऐसे ही साधन करने वाले आदमी दुख और विपत्ति के समय अपनी इच्छा से प्रकाश और शब्द में चले जाते हैं और उस समय उनको कोई दुख अनुभव नहीं होता। वह है हमारा आद जहां जाकर हम विश्राम करते हैं। प्रकृति दयावान है। यदि गहरी नींद न होती तो हम सुखी न रह सकते। संसार में रहते हुये सत्संग से विचार प्राप्त करो और विचार से सुख प्राप्त होता है।

चरन शरन ओट गहूं में, आनन्द मंगल साज सजूं।
राथास्वामी राधास्वामी हित से सिमरूं, राधास्वामी राधास्वामी चित भजूं॥

गुरु के चरणकमल की छां कौन सी है? बाहर के गुरु के चरणों की छाँ में तो हर समय कोई भी नहीं रह सकता। वह गुरु के चरण हैं प्रकाश और गुरु है शब्द। इसलिए प्रकाश और शब्द में जाने का

यत्न करो। शरीर सत है, मन चित है और प्रकाश आनन्द है। हमारा असली घर इनसे परे है, वह अजर और अमर है। वहाँ ईंट या पत्थर के मकान नहीं हैं। वह तो हमारी निज अवस्था की एक Condition है। जिस प्रकार गहरी नींद में जाने से हम यहाँ के बारे सब कुछ भूले हुये होते हैं या कलोरोफार्म सूंघने से आदमी को शरीर और मन की कोई होश नहीं होती ऐसे ही वह अवस्था है। उसमें जाकर आदमी को बाहर की कोई सुद्ध नहीं. होती और वह अपने आपमें मस्त रहता है।

जो ईश्वर मेरे अन्तर है। उसके बारे जो कुछ मैंने समझा आप लोगों को बता दिया और बाहर का जो ईश्वर है उसका तो किसीको अन्त नहीं मिला मैं ईश्वर के नियमों को पालनें का यत्न करता रहा हूं। लेकिन मैं भी तो एक इन्सान हूं। इसलिए गिर भी जाता हूं। क्योंकि मैंने अपने आपको समय का सन्त सतगुरु कहा है। इसलिए मेरा जो कर्तव्य था वह मैंने पूरा कर दिया। ग़लत है या ठीक है। इस का निर्णय बुद्धिमान स्वयं करें।

ऐ दाता! आपका उपकार है। जीवन का

तलाश मुझे आपके चरणों में ले गयी । आपने मुझे छाती से लगाया और प्रेम किया । आपने मेरे घरेलू जीवन, नौकरी के जीवन, सांसारिक जीवन और अध्यितमिक जीवन में मेरी सहायता की, आपने कहा था कि चोला छोड़ने से पहले शिक्षा को बदल जाना । मौज ने जो कराया, मैंने वह किया । ठीक और ग़लत का मुझे पता नहीं । अपनी अपनी बुद्धि के अनुसार सन्त कबीर, गुरु नानक साहिब, स्वामी जी महाराज, हजूर दाता दयाल जी महाराज, ऋषि मुनि और वेदान्ती अपनी अपनी बोली बोल गये और मैंने अपनी बोली बोली । मेरा परिणाम है शरणागतम ।

दौड़त दौड़त दौड़या, जहां लग मन की दौड़ ।
दौड़ थका मन थिर भया, वस्तु, ठौर की ठौर ।।

एक भ्रम था और मैं उस भ्रम के चक्कर में आया हुआ था । प्रकृति ने खेल खलाया । आप लोगों का आभारी हूं । आप लोग आ जाते हैं और मुझे अपने कर्म काटने का अवसर मिल जाता है । यदि आप लोग न आते तो मुझे यह अवसर न मिलता ।

तेरी लीला कौन समझे, तू तो अपरम्पार है।
एक दृष्टि से तेरे, दुखियों का बेड़ा पार है।
दुख में सुख रहता है तो, हमको नया कुछ भी नहीं।
मौज को क्या जीव जाने, दुविधा का सिर भार है।
दुख में सुख रहता है छुपकर, कष्ट का परिणाम सुख।
बन्ध में मुक्ति का छाया, मुक्ति बन्धाकार है।
राधास्नामी पूरे सतगुरु, ने बताया - भेद को।
मन में अब चिन्ता नहीं है, सुखदाई यह संसार है।

राधास्वामी गुरु क्या करता है? भेद, ज्ञान और सुख से जीवन व्यतीत करने का उपाय बताया है, शर्त यह है कि कोई निर्बन्ध और पूर्ण गुरु हो।

"सब के राधास्वामी"

परम सन्त परमदयाल पण्डित फकीर चन्द जी महाराज मानवता मन्दिर होशियारपुर ।

दिनांक 4 सितम्बर 1975

ज्ञान गुरु का रूप है, इस ज्ञान का कुछ ज्ञान है।
ज्ञान से बढ़कर नहीं कुछ, समझो जो है ज्ञान है।
शील में है ज्ञान वह तन, और यह है आत्मा।
समझो बूझो तुम मनन श्रवण, से जो अनुमान है।
तन में जब है आत्मा, फिर किस की चिन्ता है तुम्हें।
सोच लो चिन्ता से दृचिताई से, कैसी हान है।
चित न हो चंचल न मन, विक्षिप्त होने पाये कभी।
फिर तो केवल ज्ञान है, हां ज्ञान है हां ज्ञान है।
राधास्वामी की दया से, अब समझ लो ज्ञान को।
ज्ञान ही से भक्ति मुक्ति, ध्यान और अवसान है।

राधास्वामी। मैं 89 साल का हो गया हूं। बचपन से किसी चीज़ की तलाश थी। मौज़ हज़ूर दाता दयाल जी महाराज के चरणों में ले गयी। मैंने प्रण किया था कि सन्तमत से जो अनुभव मुझे

होगा, वह संसार को बता जाऊंगा। हजूर दाता दयाल जी महाराज ने आज्ञा दी थी कि फकीर ! चोला छोड़ने से पहले शिक्षा को बदल जाना। अभी जब मैं यह शब्द सुन रहा था तो मेरे अन्तर में यह विचार आया कि फकीर ! तुमने ज्ञान को क्या समझा है ! जब से आप सत्संगियों के चरणों की दया से मुझे यह विश्वास हो गया कि मैं किसीके अन्तर नहीं जाता तो मेरे मन की चंचलताई तो अपने आप ही दूर हो गयी। जब मुझे यह विश्वास हो गया कि मन की जितनो फुरनायें, संकल्प या विचार हैं, यह केवल संस्कार हैं जो सुनने से, छूने से, पढ़ने से या देखने से मस्तिष्क पर पड़े हुये होते हैं तो मुझे यह सिद्ध हो गया कि मेरी बुद्धि जो किसी परिणाम पर पहूंची है या किसी निर्णय पर पहूंची है तो वह जो बुद्धि, समझ या विवेक का ज्ञान है वह असली ज्ञान नहीं है, वह तो एक दशा है जो मस्तिष्क में पैदा होती है और उस समय के लिए अकली तसल्ली और खुशी अवश्य मिलती है, मगर वह सदा नहीं रहती। यह मेरा अनुभव है। कभी कभी मनुष्य किसी विचार में आकर कितना प्रसन्नचित होता है

और गद गद हो जाता है मगर समय के बाद वह दशा चली जाती है। मेरा जीवन हर वस्तु को क्रियत्मिक रूप से देखने में, जानने में और रहनी में व्यतीत हुआ है।

जो असली ज्ञान मैंने समझा है, वह क्या है? मेरा अपना आप जो असल में मैं हूं। जब वह मानसिक विचारों, शकलों, बौद्धिक ज्ञान और मन की भक्ति को छोड़ जाता है तो वह अपने आप में ठहर जाता है। इस अपने आप के हैपने के अस्तित्वपने का जो भान है, उसको आप आनन्द कह लो, सुख कह लो या शांति कह लो। तो वह भान जो मेरे अन्तर में पैदा होता है, मैं उसको ज्ञान समझता हूं और वह उस समय तक रहता है जब तक मेरी अपनी वह वस्तु, जो सब की साक्षी है, वह अकेली है और अपने आप में है। जब वह अपने आपको नीचे ले आती है तो वह जो असली ज्ञान है वह नहीं रहता है। मैं अभी तक शरीर में आता रहता हूं या वह जो मेरा रुप है वह शरीर मन और मस्तिष्क के विचारों में आ जाता है। यदि तो उस समय जब मैं नीचे आता हूं और जो कुछ महसूस करता हूं उस

में यदि उस असली ज्ञान की याद रहती है या निजरुप की याद रहती है तो वह यहाँ शरीर और मन के खेल में नहीं फंसती। जैसे आजकल मुझे खारश है। इस खारश का जो मुझे कष्ट है क्योंकि मैं असली ज्ञान को समझता हूं और उस ज्ञान में रहता हूं, इसलिए खारश के कष्ट को महसूस करता हुआ भी मैं इतना दुखी नहीं होता। मेरे अन्तर में एक कुरीद है जो यह चाहती है कि मैं इस शारीरिक मानसिक और आत्मिक ज्ञान या शब्द के ज्ञान को भी भूल जाऊं। मगर अभी तक मैं इस ज्ञान को भूल नहीं सकता। चाहता हूं कि असली ज्ञान में रहूं मैं जिस को असली ज्ञान समझता हूं, हो सकता है कि हजूर दाता दयाल जी महाराज का या ऋषियों और मुनियों का असली ज्ञान यह न हो और उनका कोई और असली ज्ञान हो।

मुसाफिर चल रहा है। कभी तो यह खेल समाप्त होगा। इस अवस्था को जिस में मैं हूं, वह सदा तो नहीं रहती। किसी समय इस असली ज्ञान को भूल जाता हूं। इस अवस्था का नाम 'जीवनमुक्त' अवस्था है और यदि मैं असली ज्ञान में रहूं तो उस

अवस्था का नाम है "विदेह गति"। मैं समझता हूं कि जो कुछ मैं यह काम करता हूं, लिखता हूं और सत्संग कराता हूं, इसकी संसार को आवश्यकता नहीं। यह मौज ने मुझसे क्यों कराया, क्यों मुझे यह जनून आया और क्यों मैं यह अनुभव प्रकट करता हूं ? ऐसा ज्ञात होता है कि यह मेरे वश में नहीं है। सब उस परमतत्व, आधार, ज़ात या सर्वाधार का खेल है।

"सब का राधास्वामी"

—o—

परदा

लेखक :—

सेठ दुर्गादास साहिब चण्डीगढ़

राज़दारी, परदादारी, शाने फकीरी। सन्त, महात्मा और फकीर किसी के भेद नहीं खोलते। यह इनकी शान है। प्रथम तो वे किसी के भेद जानने का यत्न नहीं करते। मौज पर रहना फकीर का काम है। फकीर का हर एक काम मौज अधीन होता है। एक एक जीव अपनी दुख भरी कहानी सुनाता है। लेकिन फकीर गंभीर होता है। अपने मनका मालिक है। हर एक का भेद अपने मन के परदा में छुपा रखता है और सबको शान्ति देता है।

वास्तव में परदा संसार में हर एक वस्तु की शान है। सचाई पर परदा है, तो सचाई सचाई है। जब सचाई पर से परदा उठ गया और सचाई बताई गयी, सचाई न रही। जब तक परदा हैं, उसकी ओर

आकर्षण है । दर्शन की चाह बढ़ती जाती है । परदा खुला चाह समाप्त हो जाती है। किसी ने खूब कहा है :–

हमने दरपरदा तुझे, शबरोज़ भी देख लिया।
अब न कर परदा तू. ए परदानशीं देख लिया।

प्रकिृत ने हरएक वस्तु पर परदा दे रखा है। मक्की पर कई परदे हैं, गंदम पर परदा, जौ पर परदा, आम परदा में है, नारंगी पर त्ररदा है, सेब पर परदा। पेड़ की छाल पेड़ का परदा है। प्रकृति में परदा की हर एक स्थान पर व्यवस्था है। परदा में हर एक वस्तु की सुन्दरता बढ़ जाती है और परदा इस सुन्दरता की देख-रेख करता है।

इन्सान को देखो। कपड़े पहने हुये है तो इन्सान अन्यथा हैवान। क्या यह ठीक नहीं है। बिना परदा के इन्सान को पागल कह दिया जाता है या बेशर्म। यदि परदा में विषेषता न होती तो अबतक सारा संसार बिना परदा के, बिना कपड़ों के चलता फिरता दिखाई देता। लेकिन ऐसा नहीं है क्योंकि हर व्यक्ति परदा का इच्छुक है।

कहा गया है।

भजन भोजन और नारी, तीनों परदा के अधिकारी।

यूं तो मनुष्य का हर काम परदा में है। इसका व्योपार परदा में होता है। लेखा जोखा परदा मैं रखा जाता है। लेन देन परदा में होता है। बातचोत (वार्तालाप) परदा में होतो है। रहन सहन परदा में होता है। क्योंकि मानव परदा को अच्छा समझता है। देखते नहीं हो, जब तक इन्सान बोलता नहीं इसकी मूर्खता का पता नहीं लग सकता है। इसलिए परदा बुद्धिमता हैं।

अध्यत्मिकता में भी परदा सर्व प्रथम है। सैंन बैंन में बात समझाई जातो है। कबोर साहिब ने तो साफ शब्दों में कह दिया।

धर्मदास तोहे लाख दुहाई, सार भेद बाहर न जाई

स्वामो जी महारा ने इस बात की पुष्टि कर दी।

गुरु बिना कोई भेद न जाने, वह तोहे कहें अलग में।

यहां अलग का अर्थ परदा में बातचीत की जातो है। भेद पर परदा है। परदा मैं भेद खोला जाता है। परदा है तो भेद को तलाश है और भेद का मूल्य है अन्यथा भेद का कोई ग्राहक न होता।

अब भेद जानने का जज्बा है।

आप जानते हैं कि चोर भी रात के अंधेरे के परदा में चोरी करता है। हर पाप परदा में किया जाता है।

इसलिए ऐ मानव ! तू परदा की कदर कर। किसी के भेद जानने का यत्न मत किया कर। यदि किसी के भेद का पता लग भी जाये तो न खोलने की शक्ति रख। किसी के भेद को बताना महा-पाप है।

परदादारी, राज़दारी, शानें फकीरी।

"सब को राधास्वामी"

पत्र व्यवहार द्वारा ज्ञान

पत्र नं १

प्यारे भाई ! राधास्वामी

तुम्हारा खत पढ़ा, मुझे हंसी आ गई। आम दुनिया संत कृपालसिंह को पूरा गुरु मानती थी, वह सतसंग में बैठाकर लोगों की सुरतें चढ़ा देते थे। अगर वह कर सकते थे सो तुम्हारा काम क्यों नहीं किया।

जहां काम तहां नाम नहीं जहाँ नाम नहीं काम।
रवि रजनी दोनो ना मिलें, इक ठौर इक याम।

दूसरे कबीर ने भी कहा है।

कामी कबहू न गुरु भजे, नाम गुरु का ले।

ज़ाहिरा कामी ही गुरु को भजते हैं। गुरु भजने का अर्थ किसी आदमी को याद करना नहीं। भज का अर्थ है (गढ़ जाना), गुरु नाम है ज्ञान का, समझ का और विबेक का। सदज्ञान सदविवेक हर समय दिमाग़ में रखना ही सच्चे गुरु को भजना है। मिसाल समझो तुम्हारा नाम मां वाप ने रविदत्त

रखा वो यकीन इतना तुम्हारी खोपड़ी में बैठ गया है कि तुम अपने आपको रविदत्त के अलावा कुछ और नहीं समझ सकते।

नाम दिया नहीं जाता लिया जाता हैं। (पहले दाता शिष्य भया जिस तन मन अर्पा शीश। पीछे दाता गुरु भया जिस नाम दिया बखशीश। अपने आपको जिसम और मन न समझना, इससे अलहवा, वस्तु सुरस कहलो, आत्मा कहलो, मानना ही गुरु को तन मन देना है यानि यह यकीन हो जाना कि मैं तन नहीं और मन नहीं हूं। तन मन कोई कामिल गुरु सतसंग में अपने वचनों द्वारा लेता है यानि सतसंग से जीव को यकीन करा देता है कि तू तन नहीं और मन नहीं है। इस यकीन के बाद जिस हालत में इन्सान को तवज्जा सुरत ठहरता है उसका नाम है "नाम"।

तुम खत लिखते हो और ताने भी देते हो कि अगर तुम संतगुरु हो तो मेरा यह काम करदो। मतलब इसका यह है कि तुमको मेरे संतगुरु होने में यकीन ही नहीं तो तुमको मुझसे क्या मिलेगा ? काम का वजह से तुम्हारी बुद्धि स्थिर नहीं है। इस गति

को वह पाता है जिसमें दीनता होती है। गुरुओं को अपने मान धन इज्जत की इच्छा है चेले स्वार्थ के संग बंधे हैं। मेरी किताबे पढ़ते हो। कितनी सचाई से मैंने काम किया है। तुम्हारा इलाज है "(कछुक दिनां कीजे सतसंगा, मिटै मान मद मोह अभंगा)"।

मैं आपसे प्यार करता हूं, मेरे पास शुभ भावना है और सही मार्ग बताता हूं पाखंड कुछ नहीं जानता। दूसरों को जो कुछ मिलता है या तो उनके अपने कर्म या उनका विश्वास या श्रद्धा होती है मानव मंदिर मासिक आपको मिलता रहेगा।

आपका फकीर !

पत्र नं २

होशियारपुर ।

28-10-1975

प्यारी भागवती ! राधास्वामी

पत्र मिला, मैं बूढ़ा हो गया अब इतना सफर नहीं होता दूसरे अगर धाम आऊं तो मेरे पास सफर खर्च, धाम को देने को पैसा तथा तीन चार आदमी जो मेरे साथ होते हैं उनका भी खर्चा हो तभी तो आ सकता हूं ।

दाता दयाल जी को जब कोई बाहर से बुलाते थे तो वे जवाब देते थे कि घोड़ा भेज दो मैं आजाऊंगा । मैं कोशिश करूंगा । अगर न आ सका तो दयाल दास और भूपसिंह को धाम भेजूंगा मगर मैं क्या करू ? तुम्हारे आत्मानंद साहब ने तो दयाल दास के लिये लिखा था कि उसे वापिस बुलालो वह वहां रहता तो धाम आबाद रहती । कई आदमी लेना जानते हैं देना नहीं । मेरे पास से जितनी सेवा बन सकी धाम की की और जब तक जिन्दा हूं करता रहूंगा ।

अब तुम अपना हाल देखो भगवती ! तेरा गुरु होशियारपुर में नहीं तेरे मन में रहता है । भरम में आकर समझती है बाहर दरअसल तेरे मन में रहता

है। जब तक जिन्दगी है इस अवस्था में कोई चौबीस घंटा रह नहीं सकता। अच्छा है उसे होशियारपुर तथा अपने पास भी समझो और इस विचार में प्रेम से अपने जीवन की यात्रा को ग़ुज़ारो।

मैं सच्चे दिल से चाहता हूं भागवती ! तुमको सेहत, दौलत और मनकी शांति और आनन्द मिले। मरने के बाद क्या होगा मुझे पता नहीं। कहते हैं लोग "जैसी आसा वैसी बासा"।

आपका

फकीर

Regd. No. 26265/74
MANAV MANDIR

P—Hsp—7.

1283

ADDRESS

To

Sh. A. Harmonith Rao
H. No. — 11-3-194/8
Humayun Nagar
Hydrabad 28 (A.P.
500028

19

From:

MANAVTA MANDIR
SUTEHRI ROAD,
HOSHIARPUR.

मानव मन्दिर

मासिक—

मानव मन्दिर

संरक्षक : परम दयाल पं० फकीरचन्द जी महाराज

सम्पादक : सेठ दुर्गादासजी

२	दसम्बर १९७५	संख्या ८

शक्ति की रक्षा

लेखक :—

सेठ दुर्गादास साहिब चण्डीगढ़

महाराज जी ने 17-8-75 के सत्संग में फरमाया कि इस समय में लड़के लड़कियों के आचार गिरते जा रहे है। माता पिता को बिना किसी हिचकचाहट अपनी संतान को वीर्य रक्षा की शिक्षा देनी चाहिए। उन्होंने और भी बहुत कुछ सुन्दर शब्दों में कहा जोकि "मानव मन्दिर" पत्रिका में प्रकाशित होगा। आपने इसको पढ़ना और सम्भाल कर रखना। मुझे बिचार आया कि माता पिता की कठिनाईयें ध्यान में रखते हुये में कुछ सेबा करूं।

वीर्य जीव के अन्तर दुर्लभ शक्ति है। अमुल्य रत्न है। यह जीवन का स्रोत है। यही जीवन शक्त्ति है। जीवित रहने की इच्छा इसी शक्ति से मिलती है इसलिए इसको नष्ट करना जीवन को नष्ट करना हैं। वीर्य नष्ट कई ढंगों से किया जाता है। स्त्री भोग से भी वीर्य नष्ट होता है। वीर्य किसी दशा में भी नष्ट

नहीं करना चाहिए । जो नष्ट करते हैं इनको कई प्रकार की बीमारियें घेर लेती है । बुढ़ापा इनको जल्दि आन दवाता है । बुढ़ापे में ज्यादा कष्ट होता है । जल्दी कमर टेढ़ी हो जाती है । बाल सफेद हो जाते हैं । आंखों की नज़र कम हो जाती है । ऊंचा सुनने लग जाता है । हाज़मा खराब रहेगा । पाचन शक्ति क्षीण हो जाती है । पेशाब की कई प्रकार की बिमारियां आ दबाती हैं । जीव सुस्त और निर्बल हो जाता है । कोई काम सफल नहीं कर पाता । जो काम करेगा अधूरा छोड़ जायेगा । चेहरा मृतिकवत रहेगा । चेहरे का रग पीला रहेगा । गाल अन्दर घुस जायेंगे ।

ऐसे जीव पर विश्वास नहीं करना चाहिए । वह संकल्प का कच्चा होगा । इसलिए ऐ जीव ! इस जीवन शक्ति को नाश मत कर ।

ईश्वर का अर्थ है शक्ति । शरीर में वीर्य ही शक्ति है । इसलिए वीर्य की रक्षा करना ईश्वर की पूजा है । ईश्वर की भक्ति है । जो ईश्वर की पूजा करते हैं तथा अपने वीर्य की रक्षा करते हैं, वे शक्ति के पुजारी हैं । इनका स्वस्थ्य देखो । अपने स्वस्थय

में आनन्द लेते हैं। कोई बीमारी इनके शरीर में नहीं आती। बुढ़ापे में जवानी का आनन्द लेते हैं।

जो अपना वीर्य जवानी में नष्ट करते हैं। इनको उस समय जवानी के जोश के कारण पता नहीं होता। हमारे अन्तर शक्ति इकट्ठी करने का एक भंडार है जिसके बल पर हम सारा जीवन ससार के काम करते रहते हैं। वे इस भंडार को एकत्र नहीं होने देते जो बड़ी भारी हानि है। जिसका प्रभाव बुढ़ापे में पढ़ता है।

वीर्य कई ढंगों से नष्ट किया जाता है। इस से हर जीव को होशियार रहना चाहिए। स्वप्नदोष भी एक बीमारी हैं जिसमें कई जीव ग्रस्त हैं। इसका इलाज यह है। रात का भोजन बिलकुल बन्द कर दो। सोने से कम से कम तीन घण्टे पहले हलका भोजन खाया जाये। गर्म वस्तु से परहेज़ हो। सारा दिन खूब काम करना चाहिए जिससे ज्यादा थकान आ जाये। सोते समय अपने सिर और पांव को ठण्डे पानी से अच्छी प्रकार धो लो। बाद में चारपाई पर मत लेटो बल्कि कोई धार्मिक किताब पढ़ो। ईश्वर भजन गाया करो। जब खूब नींद आ जाये, उस समय चारपाई पर लेट

जाओ ताकि सोते ही नींद आ जाये। कुछ दिनों ऐसा करने से स्वप्नदोष बन्द हो जायेंगें ।

हर एक व्यक्ति को २५ साल की आयु तक ब्रह्मचर्य का पालन करना चाहिए। इससे पहले विवाह नहीं करना चाहिए भोग नहीं करना चाहिए। वीर्य को २५साल तक बिल्कुल सुरक्षित रखना चाहिए। इसकी शत प्रतिशत रक्षा करनी चाहिए। फल पक जाने के वाद स्वादिष्ट होता है। वीर्य २५ साल के बाद पकता है। वीर्य को पकने दो। आप इस समय इसकी रक्षा करोगे बाद में यह आपकी रक्षा करेगा। यह बिलकुल सच्ची बात है। मेरा विवाह २५ साल की आयु में हुआ मैंने ७० साल तक किसी दवाई का प्रयोग नहीं किया न कभी बिमार हुआ। अब ७८ साल की आयु है और प्रतिदिन आठ घण्टा काम करता हूं।

गृहस्थी ही ब्रह्मचर्य धर्म का पालन कर सकते हैं जो पुरुष अपनी स्त्री से भोग अपनी स्त्री की इच्छा पर करते हैं। वे एक प्रकार के ब्रह्मचारी हैं। मैं इनको ब्रह्मचारी ही कहूंगा। सदा अपनी स्त्री की इच्छा पर जीवन व्यतीत करो। घर में खुशी

शान्ति रहेगी । आनन्द मिलेगा । कलह कष्ट न होगा । झगड़ा न होगा । करके देख लो ।

वर्षाॠतु में स्त्री भोग से बिलकुल परहेज़ करना चाहिए बरसात ॠतु में परिवर्तन के कारण मानव के रक्त में भी परिवर्तन आ जाता है । आखिर रक्त से ही बीर्य बनता है । वर्षांॠतु, में भोग करने से निर्बलता ज्यादा आती है । कमज़ोरी अधिक अनुभव करोगे । शायद कोई बीमारी आ दबाये । इसलिये ऐ मानव ! तू वर्षाॠतु, में भोग से परहेज़ कर । जेठ आषाढ़, सावन और भादों में बिलकुल भोग नहीं करना चाहिए ।

जानवरों, पक्षिथों और हैवानों का भोग के लिए विशेष 2 समय और मौसम होता है । जब वे भोग करते हैं बेशक वह रात दिन इकट्ठे रहते हैं, लेकिन समय से पहले कभी भोग कहीं करते । समय पर केवल एक बार भोग करते हैं । क्या इन्सान इन जावरों और पक्षियों से गया गुज़रा है जिसका कोई असूल ही नहीं है । ऐ मानव ! तू प्रकृति को देख और प्राकृतिक असूल पर चल । कबीर साहिब फरमाते हैं ।

कामो कुत्ता तीस दिन अन्तर होय उदास ।
कामी नर कुत्ता सदा छः ऋतु बारह मास ।।

इसलिए असूल बना लो। आज से प्रण करलो कि कम से कम दो महीने के बाद भोग करूंगा और इसी प्रकार अपने वीर्य को रक्षा करूंगा। दूसरे यदि आप कर सकते हैं तो प्रण करो कि मैं संतान के लिये भोग करूंगा। अपनी स्त्री को विषय का औजार नहीं बनाऊंगा।

भोग का समय ब्रह्म महूरत होना चाहिए। जो कि प्रातः एक बजे से चार बजे तक होता है। संतान नेक, पारसा और शुद्ध बिचारों वाली पैदा होती है। गर्भ स्थित होने के बाद भोग करना महान दोष है। जिसका परिणाम अच्छा नहीं निकलता। बच्चे पर बहुत बुरा प्रभाव पढ़ता है। भोग कभी पेट भरकर खाना खाने के बाद नहीं करना चाहिए। इस दिन हल्की खुराक लें :

मैंहगाई का समय है । इसलिए यह युग की पुकार है कि केवल एक या दो बच्चे पैदा किये जायें

ताकि इनका पालन पोषण और शिक्षा ठीक ढंग से की जा सके। यह आजकल बहुत आवश्यक हो गया है। यदि इस पर अमल नहीं करोगे तो कष्ट उठाओगे।

सतगुरू की दया वृष्टि

सत्संग हज़ूर परमसन्त परमदयाल बाबा फकीर चन्द जी महाराज मानवता मंदिर होशियारपुर।

दिनांक १७ दिसम्बर १६७५

गुनानीत गुन सगुन स्वरूपम, अविनाशी राधास्वामी।
निराकार साकार अनुपम, सुखरासी राधास्वामी॥
दीनानाथ कृपाल दयाला, प्रतिपाला जगदाधारी।
सत्तलोक सतधाम निवासी, सतवासी राधास्वामी।
विरज विभो मंगल दानी, चेतन धन विमल आनन्द महा।
काम अकाम सकाम प्रकाशी, कैलाशी राधास्वामी।
रूप रहित आकार रहित, मन अमन रहित अदभुत धामी।
नहीं नाम अनाम नहीं नामी, सर्वनामी राधास्वामी॥
गुरु रूप में तेरी महिमा है इस रूप में प्रेम मिले मुझको।
मन बचन कर्म से जपा करूं, राधास्वामी राधास्वामी॥

राधास्वामी। मैं अपने आप से पूछता हूं कि ऐ दिवाने फकीर ! तुम क्या करते हो। यह मकड़ी का जाला तुमने क्यों बनाया ? संसारवालो और मित्रो।

वचपन से मुझे कोई तालाश थी। उस तलाश के सिलसिले में अपने एक दृष्य द्वारा हज़ूर दाता दयाल महर्षि शिवब्रतलाल जो महाराज के चरण कमलों मैं गया था। उन्होंने मेरो कुरीद मिटाने के लिए यह काम दिया था। सनातन धर्म के जो बिचार मेरे मस्तिष्क पर पढ़े हुए थे वे सन्तों की वाणियों से भिन्न थे। इसलिए मैं दुविधा में पढ़ गया। क्योंकि हज़ूर दाता दयाल पर मेरा पूर्ण विश्वास था इसलिए मैं उनको तो छोड़ न सका और उस समय मैंने प्रण किया था कि इस मार्ग पर मैं सच्चा होकर चलूंगा और जो कुछ मेरा अनुभव होगा संसार को बता जाऊंगा। हज़ूर दाता दयाल जी महाराज ने मुझे फकीर बननें का आदेश दिया था। एक शब्द में वह लिखते हैं।

तू फकीर बन तू फकीर बन, तू फकीर बन भाई।
में भी तरूं फकीर चरन लग, ऐ फकीर ! सुखदाई ।।
मैं नाहिं राम कृष्ण का सेवक, ईश व्रह्म नाहिं जानूं ।
मैं फकीर का नाम दिवाना, सबसे बढ़कर मानूं ।।
जो फकीर मोहि दर्शन देवे, अपना भाग सराहुं ।
अपने तन के चाम की जूती, पग फकीर पहिनाऊं ।।

मैंने फकीर बनने में सारा जीवन खो दिया। मुझसे फकीर बना नही जाता था। इसलिए उन्होंने मुझे यह काम दिया था। फकीरी या सन्तपना क्या है? हजूर दाता दयाल जी महाराज ने एक शब्द में लिखा है।

अपने भाव में बरतें निसदिन, करें दया की वृष्टि।

फकीर या सन्त अपने रूप में रहता है। क्योंकि मुझे इस अपने रूप का पता नहीं लगता था। इस लिए उन्होने दिसम्बर 1918 में मुझे यह काम दिया था और कहा था कि फकीर! तुमको सत्संगी फकीर बनायेंगे। अब आप लोगों के अनुभवों ने मुझे फकीर बना दिया। कैसे? जबसे तुम लोगों से सुना कि मेरा रूप तुम लोगों के अन्तर प्रगट होता है, दवाईयें बता जाता है, पुत्र दे जाता है, दृष्य दिखाता है, परचे हल करा जाता है, मरते समय लोगों को ले जाता है आदि 2 और मैं नहीं होता, तब मैं अपने रूप को जानने के लिए विवश हुआ। मुझे प्रतिदिन पत्र आते हैं और लोग स्वयं भी आकर बताते हैं कि बाबा जी! आपने यह कर दिया वह कर दिया। लेकिन मैं जानता हूं कि मैं कहीं नहीं जाता, तो फिर मेरा

रूप क्या है? मेरे अन्तर वह अवस्था जहां कोई वस्तु प्रकट नहीं होती और यदि कोई वस्तु प्रकट होती है तो मैं उसको अपना नहीं समझता। उस अवस्था में ठहरने वाले का नाम सन्त या फकीर है। वह उस अपने रूप में रहता है। आप लोगों ने मुझे इस स्थान पर पहुंचाया। केवल इस एक बिचार ने कि मैं किसी के अन्तर नहीं जाता, मुझे अपने रूप को जानने के लिए विवश कर दिया। हजूर दाता दयाल जी महाराज ने मेरे नाम एक शब्द में लिखा है।

तू फकीर है मेरे प्यारे, सुन फकीर की वानी।
साधू कहें फकीर को भाई, साधू जग सुखदानी॥
पर उपकारी जन हितकारी, गुरु के आज्ञाकारी।
अवगुण त्यागी गुण के ग्राही, दया भाव चित धारी॥
निज चित सोधें मन परवोधें, जीव दोष नाहिं दृष्टि।
अपने भाव में बरतें निस दिन, करें दया की वृष्टि॥

यह है फकीर का लक्षण। फकीर अपने रूप में रहता है। यद्यपि दया तो हजूर दाता दयाल जी महाराज की है। लेकिन आप लोगों का भी मुझ पर बहुत बड़ा उपकार है कि आप लोगों के अनुभवों ने मुझे इस स्थान पर पहुंचाया। अब मैं यत्न करता रहता हूं कि मेरे अन्तर से जितने भाव विचार

निकलते रहते है, मैं उनमें न फंसू और अपने रूप में रहूं। जो फकीर शारीरिक गुरु के स्वरूप को अपने अन्तर रखता है या प्रकाश और शब्द को अपना इष्ट बनाता है, वह सन्त नहीं है। फकीर कहां रहता है।

अकह अपार अगाध अनामी।

वह उस अवस्था में रहता है। मैं वहां रहने का यत्न करता रहता हूं। मगर अभी तक वहां अधिक समय मुझ से ठहरा नहीं जाता। उस अवस्था में रहने वाला आदमी "दया की वृष्टि" क्या कर सकता है? हजूर दाता दयाल जी महाराज या स्वामी जी महाराज कैसे दया की वृष्टि करते थे यह मुझे पता नहीं। मैं दया की वृष्टि क्या समझता हूं? हमारा यह शरीर त्रिगुनात्मिक है, यह शरीर है, मन है और आत्मा है। हमारा जो असली रूप है, वह न शरीर है न मन है, न प्रकाश और न शब्द है। हमारा रूप इन सब से अलग है और वह इन सब का साक्षी है। इसका मुझे तुम लोगों से विश्वास हूआ और इस आयु में तुम लोग मेरे सच्चे सत्गुरु सिद्ध हुये। सत्गुरु कैसे दया करता है? वह त्रिगुनात्मिक जगत के नियम को जानता है। क्योंकि हमारी शारीरिक, मानसिक

औंर आत्मिक अवस्था प्राकृतिक है। वह ऐसी युक्ति बताता है या ऐसी आज्ञा देता है, जिस पर अमल करने से आदमी के अन्तर परिवर्तन आ जाता है और वह सुखी रहने और खुशी से जीवन व्यतीत करने के भेद को समझ जाता है और चिन्तारहित हो जाता है। यह है सन्त की दया। उदाहरण के रूप में एक आदमी किसी कारण दुखी है। आप के पास आता है और आप उसके विचार को बदल देते हैं और वह अपने दुख को भूल जाता है तो यह आपने उस पर दया की।

इस समय मानव जाति दुखी है, अति अधिक अशाँत है। कहीं भी शान्ति और चैन नहीं। हमारे दुखों का, हमारी अशांन्ति का या हमारी बेचैनी का कारण क्या है ? हमारे अपने ही ग़लत बिचार और ग़लत वासनायें। हम स्वयं ही अपने अन्तर मकड़ी का जाला तन लेते हैं और स्वयं ही उसमें फ़ंसकर दुखी हो जाते हैं। इसलिए शास्त्र या सन्त जीवों को इस दुख के चक्कर से बचने के लिए यह कहते हैं कि अपनी नीयत, अपनी वासना और अपने बिचार को स्वच्छ और शुभ रखो। क्योंकि शरीर और मन

में रहते हुये जो कुछ हमारे शरीर, मन और आत्मा के साथ होगा, वह हमारी वासना और हमारे विचार अनुसार होगा। इसलिए शास्त्र कहते हैं।

कर्म प्रधान विश्व कर राखा, जो जस कीना तैसो फल चाखा

इस संसार में कर्म प्रधान है। जो कुछ हम वासना या इच्छा करते हैं। यह हमारा कर्म बन जाता है। संसार में कोई भी व्यक्ति हो, चाहे वह सन्त हो, अवतार हो, पोर हो या कोई गुरु हो। उसको अपने कर्म का फल अवश्य भोगना पड़ेगा, चाहे वह कर्म अच्छा है और चाहे वह बुरा है। अपने कर्म के फल से कोई बच नहीं सकता। साधारणतय: जाग्रत में कर्म का फल हम लोग भोगते हैं। लेकिन बहुत से कर्म ऐसे भी होते हैं जो हमारे स्वपन में कट जाते हैं। जैसे तुमको स्वप्न में डर लगता है और तुम उससे दुखी होते हो। यदि स्वप्न में कोई अच्छा दृष्य आ जाता है तो तुम सुखो होते हो। यह दुखी और सुखी होना कर्म का भोग है। हम जो भो कर्म करते हैं उसका प्रभाव हमारे मस्तिष्क में रहता है और स्वप्न में वही शक्लें बनाकार हमारे सामने

आता है और हम उससे दुखी और सुखी होते है। यह दूसरी बात है कि स्वप्न से जाग्रित में आने पर हम उस दुख को अनुभव नहीं करते। जो आदमी सत्संग करते हैं, विश्वासी होते हैं या गुरु परायण होते हैं, उनके कर्म स्वप्न में या अभ्यास में कट जाते हैं।एक आदमी हर समय मन में कुढ़ता रहता है, अशांत रहता है और दुखी है वह उसके अशुभ कर्मों का उसको दण्ड मिल रहा है। दुख काभान ही सजा है और सुखका भान करना जज़ा है।जो आदमी सच्चे होते हैं या भक्तजन हैं या गुरुपरायण हैं। अपने कर्म का फल उनको भुगतना पड़ता है । मगर उनके कर्म साधन अभ्यास और स्वप्न में कट जाते हैं। यह Phychology है। कर्म का सम्बन्ध मन से है और नीयत पर है। इस वास्ते सन्तों ने सत्संग का सिलसिला आरम्भ किया ताकि जीव बात को समझकर मन को शुद्ध रखें और बूरे कर्म से बचें। मन बचन कर्म से शुद्ध रहना ही शिव संकल्पं अस्तु' है और यही सनातन धर्म की शिक्षा है। जो आदमी अपने मन में हर समय कुड़ता रहता है और दुखी रहता है। समझो कि उसने पाप किये हुए हैं।

मैं अपने आप से प्रश्न किया करता हूं कि फकीर ! तुमने यह क्या मकड़ी का जाला बना रखा है। अपने आपको समय का सन्त सत्गुरु कहते हो। तुम जीवों पर क्या दया कर सकते हो ?

निज चित सोधें मन परवोधें, जीव दोष नाहिं दृष्टि।
अपने भाव में बरतें निसदिन, करें दया की वृष्टि ॥

क्योंकि मैं फकीर हूं। इसलिए मैं जीवों पर दया की वृष्टि यह करता हूं कि उनको जीने का भेद बताता हूं। मैं उनको यह बताता हूं How to live in this world मेरे जिम्मे कर्तव्य है। तीन कर्तव्य हैं मेरे जिम्मे :—

तू तो आया नर देही में, धर फकीर का भेसा।
दुखी जीव को अंग लगाके, लेजा गुरु का देसा।
तीन ताप से जीव दुखी है, निबल अबल अज्ञानी।
तेरा काम दया का भाई, नाम दान दे दानी॥
तेरा रूप हैं अद्भुत अचरज, तेरी उत्तम देही।
जग कल्याण जगत में आया, परम दयाल स्नेही॥

मैं अपने कर्तव्य को पूरा करने के लिए संसार को यह बताना चाहता हूं कि अपनी नीयत को साफ रखो। कर्म तुम्हारी नीयत से बनता है। जैसे कि तुमने स्वभाविक एक पत्थर फैंका। वह किसी को

अचानक लग गया जिससे उसकी मौत हो गई । क्यों कि तुमने उसको मारने के लिए वह पत्थर नहीं फेंका। इसलिए सरकार भी तुमको दोषी नहीं ठहरायेगी । मेरी समझ में यह आया है कि यदि आदमी अपनी नीयत को साफ रख कर कोई काम करेगा तो उसको उस काम का फल नहीं भोगना पड़ेगा। क्योंकि उसकी नीयत ठीक है । मेरे जिम्मे यह कर्तव्य है । मैं फूंक तो मार नहीं सकता शायद कोई दूसरा महात्मा फूंक मार सकता हो तो मुझे पता नहीं। मैं केवल विचार देता हूं। कोई दुखी मेरे पास आता है तो मैं उसको आशावादी विचार देता हूं। क्योंकि मैं साफ नीयत से उसे विचार देता हूं और उसको यह विश्वास होता है कि बाबा जी ने कह दिया है तो उसके विश्वास से उसका काम हो जाता है और उसका Credit मुझे मिलता है यद्यपि मैं कुछ नहीं करता। मैं केवल विचार को बदल देता हूं। फकीर की संगत से आदमी के भ्रम चले जाते हैं और उसको शान्ति मिलती है। मेरी पहचान यही है कि जो लोग मेरे सत्संग में आते हैं, यदि उनके भ्रम दूर नहीं होते और उनको शान्ति नहीं मिलती तो मैं

सन्त नहीं हूं, शर्त यह कि वे लोग शान्ति प्राप्त करने की इच्छा से मेरे पास आये हों । लेकिन लोग मेरे पास ज्ञान प्राप्त करने के लिए नहीं आते। वे तो सांसारिक दुखों से निकलने के लिए आते हैं। यदि तुमको विश्वास है तो अपने ही विश्वास से तुम सफल हो जाओगे । इसलिए मैं किसी को निराशावादी विचार नहीं देता। जो कुछ मेरी समझ में आये वह बता देता हूं ताकि दूसरों को सुख मिले ।

आप लोगों को कहना चाहता हूं फि सदा आशा वादी रहो यदि आशावादी रहोगे तो तुम्हारे ही विश्वास से तुम्हारे काम बन ज़ायेंगे । कभी यह मत सोचो कि यह बुरा हो जायेगा या यह हानि हो ज़ायेगी। बुराई की ओर मत सोचो। जो डरता है वह डराया जाता है। हर एकवस्तु अपनी ओर अपने जैसे को खींचती है। रुपया रुपये को खींचता है, खुशी खुशी को खींचती है। शराबी के पास शराबी आयेगा,भक्त के पास भक्त आयेगा और चोर के पास चोर आयेंगे। तुमको प्रमाण देकर जीने का भेद बता रहा हूं। इसलिए सदा आशावादी रहो और नफी Negative के बिचार मत पास आने दो। स्वामी जी

महाराज ने अपनी वाणी मैं लिखा है ।

गुरु तारेंगे हम जानी, तू सूरत काहे बुरानी ।।

इसमें भी यही विचार दिया गया है। इसलिए सबसे पहले यह विचार रखो कि मालिक जो करता है, अच्छा करता है । जो कुछ हो रहा है अच्छा हो रहा है । यदि यह विचार पक्का कर लो तो जो कुछ भी होगा वह तुम्हारे लिए अच्छा होगा । जैसे मीरां बाई को यह विश्वास था कि ठाकुरों का प्रसाद अमृत होता है । उसको बिष दिया गया तो उस विष ने अमृत का काम किया यह विश्वास का फल है । यदि तुम एक आदमी को बुरा समझते हो वह यदि तुम्हारे साथ नेकी भी करे तो भी तुम्हारे साथ बुराई ही होगी क्योंकि तुमने उसको बुरा माना हुआ है । तुम लोग गृहस्थी हो । तुमको जीने का भेद बता रहा हूं । सदा आशावादी रहो। यह विश्वास रखो कि 'जो करी है सो भली' आदमी के विचार में शक्ति है । विचार पर ही तुम्हारे साँसारिक जीवन का आधार है । जैसा ख्याल बैसा हाल । जैसी करनी वैसी भरनी और जैसी मति वैसी गति। इसलिए सदा अपने विचार को ठीक रखो ।

निज चित सोधें मन परबोधें, जोव दोष नहीं दृष्टि।
अपने भाव में वरतें निसदिन, करें दया की वृष्टि॥

मुझे नहीं पता हजूर दाता दयाल जी महाराज़ का क्या भाव है। लेकिन मैं जो दया की वृष्टि कर सकता हुं, वह यह है कि मैं दूसरों को अच्छा विचार देता हूं या शुभ भावना देत हूं और जीने का भेद बताता हूं। देखो ! यदि तुम अपने बाल बच्चों को बुरा कहते रहोगे, वदमाश कहते रहोगे या खराब कहते रहोगे तो तुम्हारे ही विचार की धार तुम्हारे बच्चों को बुरा बना देगी। यह पाठ मैंने हज़ूर दाता दयाल जी महाराज से सीखा था। एक बार मैं उनके दरबार में गया वहां उनकी लड़की का तीन चार साल का बच्चा खेल रहा था। मैं उससे बहुत प्यार करता था। मैंने प्यार से उसे कहा कि तू बहुत गन्दा है। हज़ूर दाता दयाल जी अन्दर बैठे थे। उन्होंने सुन लिया जौर मुझे भीतर बुलाकर कहा कि कभी भी किसी को ऐसा मत कहो। तुम्हारे विचार की धार उसमैं जाती है। अब तुम देखो कि बच्चे के पैदा होने के समय जो स्त्री सबसे पहले बच्चे को हाथ लगाती है उसका प्रभाव बच्चे में जाता है। क्योंकि

बच्चे की सलेट बिलकुल साफ होती है उस पर जिस प्रकार के संस्कार डालोगे वही बनेगा। माँ का काम बच्चे को केवल दूध पिलाना ही नहीं है, उसको बिचार देना भी है। हज़ूर दाता दयाल जी महाराज बहुत ऊंचा विचार देते थे। यह दुर्गादास उस समय बच्चा ही था। वह कहा करते थे सेठ दुर्गादास को बुलाओ। उन्होंने विचार दिया अब सेठ बन गया। मुझे फकीर कहा करते थे। मैं फकीर था या नहीं। मगर उनके विचार ने मुझे फकीर बना दिया। अब मैं अपने लड़के को सदा Padam the Great लिखा करता हूं। वह Great बन गया है। तुमको भेद बता रहा हूं ताकि तुम्हारा जीवन सुख और शान्ति से व्यतीत हो हो जाये। यह मनोमय जगत है। यहाँ सब मन का खेल है। विचार में बहुत शक्ति है ! इसलिए अपने बच्चों को या अपने सम्बन्धियों को अच्छा बिचार दो और किसी से घृणा मत करो अन्यथा तुम्हारा घृणा का बिचार तुमको भी और जिससे घृणा करते हो उसको भी नष्ट कर देगा। एक आदमी शराब से घृणा करता है तो वह घृणा उसके सामने आयेगी। एक व्यक्ति सत्संगी भी था लेकिन वह शराब पीके मेरे पास आ जाता। मुझे उससे घृणा आ

गयी और मैंने हज़ूर दाता दयाल जी को लिखा कि यहां कई आदमी शराब पीते हैं। उन्होंने उत्तर दिया कि क्योंकि तुम शराबिओं से घृणा करते हो इसलिए तुमको शराबियों से वासता पड़ेगा। कुछ समय के बाद मदरस्सा रेलवे स्टेशन पर एक शराबी A. S. M. आ गया जो टिकटें बेचकर खा जाता था और मुझे इस बारे में बहुत कष्ट हुआ। उस समय मुझे हज़ूर दाता दयाल जी महाराज की बात याद आयी। जो सदा शराब की बुराई करता है वह स्वयं शराब पीने लग जायेगा। इसलिए Don't hate any body or any thing.

हज़ूर दाता दयाल जी फरमाते हैं कि फकीर का यह कर्तव्य है कि वह स्वयं दुख उठाकर भी जीवों को यम से छुटकारा दिलायें। मैं अपने आप से पूछता हूं कि तुम जीवों को यम से कैसे छुटकारा दिला सकते हो? मित्रो! मैंने यह मंदिर बनाया और गुरु का काम किया। मगर अपने निजी स्वार्थ के लिये नहीं। जीवों को यम से छुटकारा दिलाने के लिए यह काम किया है। मैं आप लोगों को क्या शिक्षा देता हूं कि तुम्हारे मन में जितने भाव बिचार और संकल्प पैदा

होते हैं । ये असल में हैं नहीं । ये केवल संस्कार हैं । क्योंकि तुम उनको सत मानते हो । इसलिए तुम दुख और सुख उठाते हो । जिसको यह समझ आ जाती है कि मेरा रूप और है और ये विचार संस्कार हैं । उसको यम से छुटकारा मिलता है, दूसरों को नहीं । हजूर दाता दयाल जी महाराज ने जो मुझ पर कर्तव्य लगाया था, मैं वह अपना कर्तव्य पूरा कर रहा हूं । मैं कहता हूं कि मैं किसी के अन्तर नहीं जाता । जैसे मैं नहीं होता ऐसे ही यह विचार भी नहीं होते । यदि किसी को अन्त समय पर यह विचार आ गया कि जितने रंगरूप मेरे सामने आ रहे हैं । यह सब माया हैं तो फिर वह मन में नहीं आयेगा बल्कि वह प्रकाश में चला जायेगा और उसको छुटकारा मिल जायेगा । मैंने शिक्षा को बिलकुल सरल कर दिया है । मगर जो कठिनाई चाहने वाले हैं वे सरलता को पसन्द नहीं करते । इसका एक उदाहरण आपको बताता हूं । हकीम अजमल खां जब नमाज़ के लिए जाते थे तो रास्ते में सैकड़ों गरीब होते थे । वह उनको दो २ पैसे की दवाई बताते थे। उससे गरीब स्वस्थ्य हो जाते थे । काबुल का एक

नवाब भी इलाज के लिए उनके पास आया । उन्होंने उसको तीन चार सौ रुपये का नुसखा लिखकर दिया। दो चार दिन के बाद वह नवाब भी भेस बदलकर उन गरीबों में खड़ा हो गया । उन्होंने उसको भी वही दो तीन पैसे का नुसखा बताया। नवाब ने कहा कि क्या आपने मुझे पहचाना है ? हकीम साहिब ने कहा कि हाँ पहचाना है । नवाब ने कहा कि कहाँ तीन चार सौ रुपये का नुसखा और कहां दो तीन पैसे का नुसखा, जबकि बीमार भी वही है और बीमारी भी वही है । हकीम साहब ने कहा कि उस समय तुम एक नवाब के तौर पर मेरे पास आये थे । यदि उस समय मैं यह नुसखा बताता तो आपको विश्वास न होता और आप स्वस्थ न होते। इस समय आप जिस रूप में आए हैं, आपको इसी से आराम हो जायेगा । इससे सिद्ध होता है कि मुशकलपसन्द आसान बात की कदर नहीं करते । इसलिए जिन आदमीयों के मस्तिष्क में पंथ या धर्म का भ्रम आया हुआ है । वे मेरी इस आसान बात पर विश्वास नहीं करेगें । मैंने मार्ग बहुत सरल कर दिया है । थोड़ी बुद्धिवाला आदमी भी मेरी बात को समझ सकता है।

यह है यम से छुटकारा पाने का उपाय जो मेरी समझ में आया है। मगर मुझे किसी बात का दावा नहीं। जो मैंने समझा वह कहा और जब तक जीवित हूं अपना कर्तव्य पूरा करता रहूंगा।

धर कपास को गति विमल चित निरस विशुद्ध कहावें।
सहें विपत्ति कठिनाई जग की. और का दोष छिपावें॥
सरल सुभाव रहें जग माहिं, अपना रूप संभारें।
औरन के अवगुन नहीं देखें, दया का मरम बिचारें॥

जो दूसरों की नुक्ताचीनी करता है, वह स्वयं उसी गढ़े में गिर जाता है। इसलिए सन्त या फकीर किसी की निन्दा नहीं करते और न हो किसी से घृणा करते हैं। हजूर दाता दकाल जी महाराज कभी किसी को बुरा नहों कहते थे। उनका जीवन असली जीवन था। लेकिन मुझ मैं अभो कमी है। वह सदा आशा वादी विचार दिया करते थे।

सुख देवें दुख हरें निरन्तर, क्षमा करें अपराधा।
हंसी खुशी आनन्द प्रेम गति, अगम अलेख अवाधा॥
नाम फकीर धराया तूने, हो फकीर अब सांचा।
जैसा नाम तो गुन भी वैसा, मन कर्म सहित सुबासा॥

वह मुझे कहते हैं कि तू फकीर बन। मैंने सारी आयु फकीर बनने में खो दी। मुझे सच्चा फकीर

बनाने के लिए ही उन्होने मुझे यह काम दिया था। पिछले समय में स्पष्ट वर्णन का दस्तूर नहीं था। केवल इशारा किया जाता था। मैंने इशारा नहीं किया। मैंने सच्चाई का डन्डा हाथ में लिया हुआ है। मैं कई बार जब अकेला बैठता हूं तो सोचता हूं कि फकीर ! तुम अपने आपको समय का सत्गुरु कहते हो। तुम किसी को क्या नाम दान दे सकते हो? क्या नाम दान दूं, मेरा बचन ही नाम है। यदि किसी को मेरी बात पर विश्वास आ जाता है और वह उस पर अमल करता है तो उसका सांसारिक जीवन सुखी बन जाता है। जो संसार में सुखी नहीं, पेट की चिन्ता है, उसका मन चंचल रहेगा। नाम की कमाई करने से उसके मन के विकार और बढ़ जायेंगे और वह और भी दुखी हो जायेगा। इसलिए मैं किसी को नाम नहीं देता। मैं जीवन को सुखमय बनाने की युक्ति बताता हूं। यदि तुमने नाम ले भी लिया और दो दो घण्टे कानों में उंगलियां डालकर अभ्यास भी करते हों तो यदि तुम्हारा आचरण ठीक नहीं है तो तुम संसार में सुखी नहीं रह सकते। कर्म का फल सबको भोगना पड़ता है। कर्म का सम्बन्ध

नीयत से है और नीयत का सम्बन्ध मन से है । यदि तुम्हारा मन साफ नहीं है तो तुम्हारे बुरे कर्म बढ़ते चले जायेंगे और तुम दुखी हो जाओगे । तुम लोग सत्संग में आये हो । मैं तुमको वह भेद बता रहा हूं जिससे तुम अपने जीवन को सुखी बना सको । यह सांसारिक जीवन की दशा है ।

निज चित सोधें मन परबोधें, जीव दोष नहीं दृष्टि ।
अपने भाव में वरतें निसदिन, करें दया की वृष्टि ॥

अपनी आत्मा से पूछता हूं कि क्या तू फकीर बन गया ? शत प्रतिशत तो नहीं मगर ९५ प्रतिशत बन गया हूं । मैं क्या दया की वृष्टि कर सकता हूं ? मैं प्रकृति के भेद को समझता हुआ अर्थात Mental & Spiritual psychology को समझ कर जीवों को सलाह देता हूं राय देता हूं कि ऐ मानव ! तू ऐसा कर और ऐसा मत कर ताकि तेरा जीवन सुखमय हो जाये ।

मोह मैया और छल चतुराई छोड़ें मूल विकारा ।
परहित लागी सहज विरागी, ज्ञान बुद्धि भंडारा ।

यह मेरे नाम आज्ञा है । अपने आपसे पूछता हूं कि क्या तूने मोह मैया अर्थात मेरा तेरा पना और

छल चतुराई को छोड़ दिया ? मैं इस समय जिस पदवी पर हूं यदि मैं परदा रखूं और ऐसी बात कहूं कि संसार मेरे काबू में आ जाये तो फिर मैं फकीर कैसा ? जिन महात्मों ने बात को परदे में रखकर लोगों को अज्ञान में रखा और उनसे सम्पतियें और मान प्रतिष्ठा ली वे छल चतुराई से नहीं बचे। संसार बेशक कहे, लेकिन मैं उनको सन्त नहीं कहता। मैंने कोई छल चतुराई नहीं की। यदि करता तो आज मैं भी लाखों का मालिक होता। मेरा रूप लोगों के अन्तर प्रकट होता है, सुरतें चढ़ा देता है, दवाईयें बता जाता है, परचे हल करा जाता है आदिर लेकिन मैं कहता हूं कि भई मैं नहीं गया और न ही मुझे पता हैं और मैं जो कुछ कहता हू यह शत प्रतिशत सच है। तो जिन्होंने इस बात को परदे ने रखा, वे सन्त कैसे हुये ? इसलिए मैं कहता हूं कि मैं अनामी धाम से इस फकीर के चोले में सन्तमत की सच्चाई बताने के लिए आया हूं और संसार मेरी बात की कदर नहीं करता।

सुनते नहीं हैं दुनियां के गाफिल मेरा कलाम।
बेदार होके कहता हूं ताबीर ख्वाब की॥

जैसे तुम्हारे बिचार होते हैं वैसे ही संस्कार मस्तिष्क पर पढ़ते हैं और वही समय पर शकलें बनाकर स्वप्न में, जाग्रत में या अभ्यास में तुम्हारे सामने आते हैं। इन विचारों से ही आदमी का कर्म बनता है और उस कर्म का फल सबको भोगना पड़ता है। कर्म का नियम अटल है। यह Law of Nature हैं। अब आप देखो कि समगलर या बलैक मारकीट करने वाले पकड़े जा रहे हैं और आज उनके साथ क्या व्यवहार हो रहा है। यह उनके कर्म का फल है। जिन पर अभी यह छापे नहीं भी पड़े, उनके दिल में भो घबराहट तो है न। यह घबराहट और समय का डर जो इस समय उनके मन में है, यह भी तो उनके बुरे कर्म का दण्ड ही तो है। इसलिए गुरु परायण हो जाओ। गुरु नाम है समझ विवेक और ज्ञान का। इसके अनुसार अपने विचारों को रखने का यत्न करो और अपने कर्म को ठोक रखो। इस समय जो संसार में बेचैनो घबराहट और नाना प्रकार के कष्ट हैं। ये हमारे कमों का फल ही तो हैं।

इब्तदाये इश्क है रोता है क्या ।
आगे आगे देखना होता है क्या ।।

मैं तो भाग्यशाली व्यक्ति हूं कि हजूर दाता दयाल जी महाराज के चरणों में पहुंच गया । उनकी दया और आपके अनूभवों से मुझे भेद का पता लग गया ।

दुख कलेश सह अपने सिर पर जीव का करें सुधारा ।
भव दुःख भंजन काम निकन्दन जम से दें छुटकारा ।।

आप लोग आये हैं । आप का आभारी हूं । आप मेरा कर्म कटाने में सहायक हैं । आप लोगों के आने से मुझे अपना जज्बा निकालने का अवसर मिल जाता है और मेरा कर्म कट जाता है ।

है फकींर का नाम प्यारा, में फकीर का दासा ।
तन मन धन फकीर पर वारूं वसूं सुसंग सुवासा ।।

फकीर की संगत से आदमी को शान्ति मिलती है । हजूर दाता दयाल जी महाराज़ कहा करते थे । कि मैं क्या करता हूं ? दुखी लोग मेरे पास आते हैं । मैं ध्यान से उनकी बात सुनता हूं और उनको नेक मशवरा देता हूं और वे प्रसन्न होकर चले जाते हैं । इसलिए यदि तुम्हारे पास शक्ति है, धन है, प्रेम है

और ज्ञान है तो इनसे दूसरों की सहायता करो । यही कुछ संसार से ले जाना है। क्या वही फकीर है जो संघासन पर बैठता है ? क्या संघासन फकीरी है ? हर एक आदमी फकीर हो सकता है । तातपर्य तो दूसरों को सुख पहुंचाने से है। सुनो ! सब से पहले अपने घर वालों को सुख पहुंचाओ । बूढ़े मां बाप और विधवा बहन की सेवा करो । जहां तक हो सके अपने बाल बच्चों का पालन पोषन करो और उनके चरित्र बनाओ। लेकिन तुम लोगों की घर नालों से तो लड़ाई है और बाहर वालों की सेवा करके उनको प्रसन्न रखने का यत्न करते हो। जिसके घर में शान्ति नहीं है वह लाख दूसरों की सेवा करे और उनको खुश करे, उसको कोई लाभ नहीं होगा। पहले घरवालों और अपने बच्चों का पालन पोषण करो । फिर यदि तुम्हारे पास कुछ बचता है तब दूसरां की सहायता करो। यदि तुम्हारे बाल बच्चे भूखे मरते हैं और दूसरों को तुम दान देते हो तो वह दान नहों है । वह तो उलटा पाप है। हमने मानव जाति की सेवा करनी है। जिनको प्रकृति ने तुम्हारे साथ लगाया है। उनकी सेवा करो। मैंने ऐसा किया

है। मैं गृहस्थ जीवन को जानता हूं। यदि किसी समय घरवालों की सेवा में कुछ कमी आ गयी तो ये तुमसे नाराज़ हो जाते हैं बल्कि तुम्हारे विरुद्ध हो जाते हैं। मगर फकीर वह है जो इन बातों को ठण्डे दिल से सहन करता है। मैंने बातें सहन की हैं। मैंने वड़ी समझदारी से काम किया। मैंने कई बार अपनी स्त्री को बिना बताये अपने सम्बन्धियों की सहायता की है। फकीरी बहुत कठिन है और असली जीवन व्यतीत करना बहुत कठिन है। घरवालों की सहायता करोगे तो वे खायेंगे भी और तुमको गाली भी देंगे और बाहरवालों की सहायता करने से तुम्हारा नाम होगा। इसलिये फकीर बनना बहुत कठिन है।

कठिन नाम है कठिन काम है कठिन फकीर कमाई।
जग के भव दुख नासें पल में जब फकीर जग आई॥

सन्त बनना कोई आसान काम नहीं है। इसमें कुरबानी करनी पढ़ती है। तलवार की धार पर चलना पड़ता है और संसार की लाहन ताहन सहनी पड़ती है, तब फकीर बनता है। भगवे कपड़े पहनकर फकीर नहीं बनता। फकीर भव के दुखों को दूर करता है। भव है तुम्हारा मन। फकीर आदमी के मन के

विचारों को बदल कर मन के क्लेश को दूर करता है। यह मेरी समझ में आया है।

आज भादों महीना है। सच्चे दिल से च[illegible] कि सब के लिए यह महीना अच्छा रहे और देश में शान्ति आये।

भादों मास तीसरा जारी, धौं लागी सब जग को भारी।

धौं है आग, चाह, इच्छा। सबके अन्तर कोई न कोई इच्छा है और उस इच्छा के लिए वह दौड़ता है लेकिन वह पूरी नहीं होती है।

तीन ताप का बड़ा पसारा, इक इक जीव घेरकर मारा।
काम क्रोध मद लोभ सतावें. माया ममता आग लगावें॥
जल जल जीव पड़े घवरावें छूटन की कोई जुगत न पावें॥

मेरे पास कई नौजवान आते हैं। कोई परीक्षा में फेल हुआ है। किसी को कोई बीमारी है और किसी के मस्तिष्क में नुक्स है। मैं असल कारण को समझ जाता हूं कि उन्होंने छोटी आयु में ब्रह्मचर्य नष्ट किया है और पूछने पर वे मान जाते हैं। इस लिए तुमसे कहे जाता हूं कि सबसे बुरो बीमारी काम का अंग है। आजकल बहुत से लड़के लड़कियां बचपन में ही अपना शारीरिक और मानसिक ब्रह्मचर्य नष्ट

कर देते हैं और फिर नाना प्रकार की बीमारियों मैं ग्रस्त हो जाते हैं और जीवन नष्ट हो जाता है। इसलिए मैंने शिक्षा को बदला है कि अपने बच्चों के चरित्र को सम्भालो। यह बहुत आवश्यक बात है। लज्जावश मां बाप उनको कहते नहीं। अब समय बदल गया और समयानुसार तुम भी बदल जाओ और अपनी संतान का ध्यान रखो। सबसे पहले स्वस्थ्य चाहिए। यदि स्वस्थ्य नहीं तो संसार में तुम कोई काम नहीं कर सकते। मैंने अपने लड़के के साथ ऐसा ही व्यवहार किया है। मेरा लड़का बहुत समझदार है। आज वह भी सुखी है और मैं भी सुखी हूं। मैं संसार को भी यही शिक्षा देना चाहता हूं। दिल्ली में मैंने Sh. H. S. Gupta के लड़कों को यह शिक्षा दी थी। उन्होंने मेरी बात पर अमल किया और आज वह सुखी हैं। राम नाम जपना और वस्तु है और जीवन बनाना और बात है।

कोई कर्म कोई धर्म सम्हारे, कोई विद्या कोई जप तप धारे।
कोई मंदिर जा मूरत पूजे, कोई तीर्थ कोई व्रत में जूझे ॥
यह सब भूले भटका खावें. कोई न इनकी भूल मिटावे ॥

मैं अपनी आत्मा से पूछता हूं कि सन्तों को क्या अधिकार है जो उन्होंने सबका खण्डन किया है ? अधिकार है क्योंकि हमलोग सुमरिन ध्यान या जो भी काम करते हैं वह मन से करते हैं। क्योंकि मन का काम सदा बदलना है। इसलिए हम मन से जो काम करते हैं, उसमें भी परिवर्तन आता रहता है। यदि आज बन गया तो समय आयेगा कि वह बिगड़ जावेगा। इसलिए वह स्थाई तौर पर हमको सुख नहीं दे सकता। सन्तों के मार्ग में सुरत शब्द योग है अर्थात सुरत से शब्द को सुना जाता है और इसमें परिवर्तन नहीं आता। इस वास्ते स्वामी जी महाराज ने लिखा है।

भक्त उपासक योगी ज्ञानी इन सब चक्कर खाया

मन से किया हुआ कर्म बदलता रहेगा। इससे तुमको खुशी तो मिलेगी, आनन्द भी मिलेगा, मगर शान्ति नहीं मिलेगी और तुम पार नहीं जा सकोगे। सुरत से शब्द को पकड़ोगे तब पार जाओगे। मैंने मन से बहुत भक्ति की। बड़े २ शब्द सुने और बहुत आनन्द लिए, खुशी ली। अपने अन्तर में राम, कृष्ण देवी देवते, ब्रह्मा विष्णु महेश देखे। बाहर में राम

और कृष्ण के साथ बातचीत भी होती रही, मगर शान्ति नहीं मिली । मुझे आप लोगों की दया से शान्ति मिली । जबसे मुझे पता लगा कि मेरा रूप लोगों के अन्तर प्रकट होता है और उनके अनेक प्रकार के काम कर जाता है और मैं नहीं होता और न ही मुझे ज्ञान होता है तो मुझे विश्वास हो गया कि मेरे अन्तर में भी जो कुछ प्रकट होता है यह असल में है नहीं, यह सब मन का खेल है तो फिर मैं अब मन के चक्कर में नहीं आता, यद्यपि मन में रहता हूं । लेकिन मुझे अब मन के रूप की और मन के खेलों की समझ आ गयी । अब मैं इनमें फंसता नहीं । मन की भक्ति से सिद्धि शक्ति आ जाती है और तुम्हारी सांसारिक इच्छायें पूरी होती रहती हैं । मगर आवागवन को चक्कर समाप्त नहीं होता । आवागवन के चक्कर को समाप्त करने के लिए सुरत शब्द योग है । इसलिए सन्तों ने नाम की महिमा गाई है । मुंह से राम राम जपना या राधास्वामी २ कहना नाम नहीं है । सुरत से शब्द को सुनना नाम है । सुरत से अपने अन्तर में धुनात्मिक शब्द को सुनना प्रन्व या उदगीत को सुनना नाम है । सन्तों ने इसको

शब्द कह दिया और मुसलमानों ने इसको सुलतानु-लज़कार कह दिया।

क्या पण्डित क्या भेष गृहस्थी, यह सब बसे काल की बस्ती।
चौरासी में बहुत भरमावें, नर्क स्वर्ग के धक्के खावें॥
जो कोई उनसे कहे समझाई, उलटी मानें करें लड़ाई।
कलयुग कर्म धर्म नहीं कोई, नाम बिना उद्धार न होई॥

सुरत से शब्द को सुनना नाम है। शब्द को आदमी मन से भी सुनता है, मगर वह नाम नहीं है। शब्द क्या है? आवाज़। जहां गति है वहां शब्द है। तुम्हारे अन्तर रक्त है। उसका भी शब्द सुनाई देता है। घण्टा, शंख, मरदंग, रारंग सारंग ये भी शब्द हैं। मगर यह नाम नहीं हैं। नाम सुरत से सुना जाता है। जब तक यह ज्ञान नहीं कि मैं और हूं और मन और है तब तक उसको भेद नहीं मिल सकता, इसलिए मैंने सच्चाई को खोल दिया है। सच्चाई को प्रकट करने से यह हानि अवश्य है कि धन नहीं आता। न आये। मगर मैंने अपना कर्तव्य पूरा कर दिया।

नाम भेद है अतिकर झीना, बिन सतगुरु काहू नाहिं चीन्हा।
जपने में सब गये भुलाई, नाम अगम कोई भेद न पाई॥

यह अभ्यास का विषय है। बिना गुरु के समझ नहीं आती।

जो सतगुर पूरे मिल जाते, तो वे भेद नाम का गाते।

स्वामी जी की वाणी में, गुरु ग्रन्थ साहिब में और सनातनधर्म में जगह २ यही लिखा है कि पूरे गुरु को खोजो। लेकिन संसार में कोई कहता है कि हजूर बाबा सावन सिंह जी महाराज पूरे गुरु हैं, कोई कहता है कि बाबा फकीर पूरा गुरु है। जिस पर किसी का विश्वास है वह उसी को पूरा गुरु समझता है। लेकिन पूरा गुरु है, पूरा ज्ञान और पूरी समझ। यह जहां से भी तुमको मिले वही सच्चा गुरु है। गद्दीवालों ने और डेरोंवालों ने लोगों को अज्ञान में रखकर उनको अपने दायरों में बाँधा हुआ है और सच्चाई कोई बताता नहीं है। जैसे मेरा रूप लोगों के अन्तर प्रकट होता है। लोगों के काम कर जाता है। लेकिन मैं बिलकुल सच्चाई वर्णन करता हूं कि भई! मैं कहीं नहीं जाता। यह सब तुम्हारा विश्वास है। लेकिन दूसरे स्थानों पर ऐसी घटनाओं का अनुचित लाभ उठाया जाता है और इस ढंग से बात की जाती है कि लोगों को यह विश्वास हो जाये कि ठीक गुरु महाराज जी ने हमारे अन्तर प्रकट होकर यह काम किया है और गुरु महाराज बहुत करनी वाले हैं।

मगर मैं इस पाखण्ड को पसन्द नहीं करता ।

देखो ! मदारी के तमाशे का जिस आदमी को ज्ञान है वह उसके जाल मैं नहीं फंसता और जिसको पता नहीं है वह उसकी ओर खिच जायेगा । ऐसे ही इन महात्माओं ने गृहस्थियों को अचम्भे में डालकर इनको दिवाना बनाया है और खूब लूटा है ।असलियत नहीं बताई । नाम का असल अर्थ नहीं बताया और अपनी देह के साथ बांधा । इसका परिणाम क्या निकला ? एक महापुरुष का चोला छूट जाने पर कई आदमी आत्मघात कर गये । उनको इस अज्ञान की मौत का जिम्मेदार कौन है ? वह महापुरुष जिसने अपने चेलों को सच्चाई नहीं बताई । मैं एक बार शहर में एक दुकान पर बैठा था तो वहां एक आदमी आया । दुकानदार का मिलने वाला था । दुकानदार ने कुशलता पूछी । वह बजाय कुशल आनन्द बताने के राधास्वामीमत को गालियें देने लग गया । मैंने समझा कि शायद यह मुझे देखकर राधास्वामीमत को बुरा भला कह रहा है लेकिन उसके जाने के बाद दुकानदार ने बताया कि यह फौज में एक अफसर है। इसके पाँच छ; बच्चे हैं । इसकी स्त्री एक महापुरुष

की सत्संगन थी। उस महापुरुष के चोला छोड़ने पर वह नदी में कूद कर मर गयी। अब यह दुखी है। इसलिए यह राधास्वामी मत को गालियां देता रहता है। अब आप सोचो कि यदि उस महिला को असलीयत समझाई हुई होती तो वह ऐसा क्यों करती। गुरु देह नहीं है। गुरु तो अजर अमर और अविनाशी है। गुरु न जन्मता है और न मरता है। इसलिए सदा मैं यह कहता हूं कि मेरी देह गुरु नहीं है। मेरे बचन गुरु हैं। इन पर अमल करो।

बाणी गुरु, गुरु है बाणी, बाणी अमृत सारे।

सत्संग में जाकर बात को समझो और गुरु पशु मत बनो। यह ठीक है कि जीव अज्ञानी हैं और बात को जल्दो समझ नहीं सकते। लेकिन गुरु का काम है समझाना। जिसके अन्तर मेरा रूप प्रकट हो गया वह तो मेरी सेवा करेगा। लेकिन यदि मैं उसे सच्ची बात नहीं बताता और उससे ले कर खा जाऊंगा तो मैं कहाँ जाऊंगा ? कल एक महिला आयी और कहने लगी कि बाबा जी ! आप मेरे अन्तर प्रकट हुये। आप ने यह कहा वह कहा। मेरी प्रशंसा करने लगी। मैंने कहा माई ! मैं नहीं

गया और न ही मुझे कोई पता है। यह सब तेरे विश्वास और तेरे मन का खेल है। तेरे जैसे सत्संगियों के कारण मुझे सच्चाई का ज्ञान हुआ और मैं आप लोगों को अपना सच्चा सत्गुरु मानता हूं। लेकिन दूसरे महात्मा तो यह समझते है कि यदि सच्चाई बता देंगे तो यह दोबारा हमारे पास नहीं आयेगा और न ही धन देगा। किसी ने यह भेद नहीं खोला। लेकिन मैं तो आया ही सच्चाई बताने के लिए हूं।

नाम रहे चौथे पद माहीं, यह ढूंडें त्रिलोकी माहीं ॥

गुरु है चौथे पद में। इसका वर्णन गीता में भी आया है। मगर यह बात समछाने बाला कोई नहीं है। सब लोग जीवों को अपने २ डेरों बाँधने का यत्न करते हैं।

तीन लोक में नाम न पावें, चौथे लोक में सन्त बतावें।
तीन लोक में बसता काल, चौथे में रहे नाम दयाल ॥
सोई नाम संतन से पाते, विना सन्त नहीं नाम समावे।
अब मारग का भेद बताऊं, आंख खुले तो भेद लखाऊं ॥

"आँख खुले" का अर्थ है कि तुमको सच्ची समझ आ जाये।

पहिले सुरती नैन जमावे, घेर फेर घट भीतर लावे।
बिरह हुये तो यह बन आये, मेहनत करें तो कुछ फल पावे।
देख तिल पिल जोत समावे, अनहद सुन मन बस में आवे।
मन वस होये तो सुरत जागे, निरख आकाश आत्मा पागे ।।

जब तक मन वश में नहीं आता सुरत जाग नहीं सकती। तुम लोगों के कारण मेरा मन वश में आया। कैसे ? जब से मुझे यह पता लगा कि मेरा रूप लोगों के अन्तर प्रकट होकर उनके अनेक प्रकार के काम करता है और मैं नहीं होता तो मुझे विश्वास हो गया कि मेरे अन्तर में भी मेरा मन जो कुछ संकल्प उठाता है, यह हैं नहीं, तो मेरा मन अपने आप बस में आ गया। जो लोग ज्ञान के बिना साधन करते हैं उनका मन बलवान हो जाता है और उनमें सिद्धि शक्ति आ जाती है। मगर परमार्थ के विचार से यह ठीक नहीं। यह मन का बलवान हो जाना तुमको खा जायेगा। मेरे मिलने वाले मुझे कहते हैं कि बाबा जी ! आप सच्ची बात न बताया करें। क्यों भई ? महाराज इससे Attraction समाप्त हो जाती है। लेकिन मैं सच्ची बात कहने के लिए विवश हूं। मैं तो आया ही इसलिए हूं।

शब्द पकड़ परमातम निरखे, आतम जाये परमातम परखे ।।
परमातम से आगे जाई, सुन्न महल में बैठक पाई ।।
सुन्न के परे महासुन लेखा, महासुन्न पर खिड़की देखा ।
खिड़की आगे चौक अपारा, चौक परे निरख सतद्वारा ।।

यह आन्तरिक श्रेणियें हैं। इनको वह समझ सकता है जो अपने अन्तर में अभ्यास करता है।

सतपुरुष सतनाम कहाई, सतलोक निज धाया आई।

आज यदि सन्त होते तो मैं उनसे प्रश्न करता कि आपका सतलोक से क्या भाव है। मैंने जो समझा है वह यह है मन को छोड़कर जब सुरत आगे प्रकाश और शब्द में चली जाती है तो उस समय सुरत की जो अवस्था होती है, वह है सतलोक। वहां आनन्द ही आनन्द और वहां कोई रंगरूप नहीं है। यही बात हजूर बाबा सावनसिंह जी महाराज ने कही थी कि सतलोक में सवाय प्रकाश और शब्द के और कुछ नहीं है।

यह मारग संतन ने भाखा, भेद प्रकट कुछ गोप न राखा।

सन्तों ने भेद को सैंन वैन में खोला। मगर मैंने इसको खुले शब्दों में वर्णन कर दिया। लेकिन तुम लोगों को सतलोक की आवश्यकता नहीं है। इसलिए

तुम लोगों से कहना चाहता हूं कि अपने मन को ठीक रखो और नीयत साफ रखो। तुम्हारा जोवन बन जायेगा। सन्तों का मार्ग तो निवृत्ति का मार्ग है और आवागवन से बचने के लिए है।

लोक वेद वस जो जिव होइ, सो परतीत न लावे कोई ॥

जो धर्मों और ग्रन्थों के वश में आये हुये हैं। उनको सन्तों की शिक्षा पर विश्वास नहीं आता।

लोक वेद में पड़े नाग पांच उस खाये।
जन्म जन्म दुख में रहें, रोवें और चिलावें ॥
जिन सतगुरु के बचन की, करी नहीं प्रतीत।
नहीं संगत करी संत की, वे रोवें सिर पीट ॥

सन्तों ने यह भेद किसी को बताया ही नहीं। क्या किसी सन्त ने यह कहा कि मैं तुम्हारे अन्तर नहीं जाता? सब गुरुओं ने परदा रखा अ र सच्चाई वर्णन नहीं की तो फिर वे सन्त कैसे हुये। आप लोग आये हैं। मैं जो दया कर सकता हूं कर दी। आपको जीवन व्यतीत करने का सच्चा मार्ग बता दिया। मैं शुभ भावना देता हूं। सच्चे दिल से चाहता हुं कि जो भी मेरे पास आता है। उसकी मनोकामना पूरी हो इसके सवाय मेरे पास और कुछ नहीं है। तुम्हारे

काम तुम्हारा विश्वास करता है और Credit तुम मुझको देते हो और मैं जानता हूं कि और भी कोई कुछ नहीं करता। यह सब अपना विश्वास है। गुरु नानक साहिब ने सच कहा है

"मने की गत कही न जाये।

विश्वास रखो कि जो होता है वह अच्छा होता है। अपने ही कर्म का फल है। हाय, हाय, करने से कोई लाभ नहीं। बाकी रह गया सतलोक। यह साधारण संसार की वस्तु नहीं है। यह सन्तों का मार्ग है। तुम लोगों को नहीं चाहिए। जिसका समय आ जाता है वह इस ओर आता है। मैंने जगत कल्याण के लिए काम किया है। जो कुछ मेरा Reading है, वह कहता हूं और काफी समय से कह रहा हूं कि अपने मन पर नियन्त्रण करो। अपनी नीयत को स्वच्छ रखो। कर्म का सम्बन्ध नीयत से है। मन में बहुत शक्ति है। न्यूटन की थ्योरी के अनुसार और विज्ञान के सिद्धांत के अनुसार हमारी हर एक गति और हमारा हर एक विचार ऊपर अपने अपने लोक या सैन्टर में जाता है ओर वहाँ से शक्तिशाली होकर वापस उसी स्थान पर आकर प्रभाव करता है जहां से कि वह चला था।

यदि नेक विचार है तो तुम्हारी भलाई होगी और यदि बुरा बिचार है तो तुमको दुख उठाना पड़ेगा। आजकल घृणा और द्वेष का ज़ोर है । इसलिए यह आशा रखना कि संसार में शान्ति आ जायेगी वहुत कठिन है। जो विचार निकल चुके हैं और फैल चुके हैं, उनका फल तो अवश्य भोगना पड़ेगा। वह तो नष्ट नहीं हो सकता। हां ! यदि भविष्य के लिए अच्छे विचार रखो और अच्छे कर्म करो तो पिछले कर्मों के फल का सूली से काटा हो सकता हैं । मैंने जीवन में बड़े २ सन्तों और भक्तों की दशायें देखीं। उनको अपने कर्मों का फल भोगना पड़ा ।

मेरा काम आप लोगों को हकीकत बताना है। मैं आप लोगों की चौकीदारी करता हूं। मानना या न मानना तुम्हारा अपना काम है । तमाशा समझ के सत्संग में मत आओ। अपने जीवन को बनाने के लिए आओ तब तुम्हारा कल्यान होगा। मेरे पास से जो समझ और ज्ञान तुम ले जाओगे वह तुम्हारी सहायता करेगा। मैं किसी की सहायता नहीं कर सकता। तुम भूल में हो ।

"सब का राधास्वामी"

सत्संग हजूर परम दयाल जी महाराज मानवता मंदिर, होशियारपुर ।

दिनांक 7 सितम्बर 1975

गुनानीत गुन सगुन स्वरूपम, अविनाशी राधास्वामी ।
निराकार साकार अनूपम, सुखरासी राधास्वामी ॥
दीनानाथ कृपाल दयाला, प्रतिपाला जगदाधारी ।
सत्तलोक सतधाम निवासी, सतवासी राधास्वामी ॥
विरज विभो मंगल दानी, चेतन धन बिमल आनन्द महा ।
काम अकाम सकाम प्रकाशी, कैलाशी राधास्वामी ॥
रूप रहित आकार रहित मन अमन रहित अदभुत धामी ।
नहीं नाम अनाम नहीं नामी, सर्वनामी राधास्वामी ॥
गुरु रुप में तेरी महिमा है, इस रुप में प्रेम मिले मुझको ।
मन बचन कर्म से जपा करूं, राधास्वामी राधास्वामी ॥

राधास्वामी ! मैं अपने आपसे यह प्रश्न करता हूं कि तूने यह सत्संग कराने का जनून क्यों लिया है । राधास्वामीं की बाणियें आपने भी सुनी होंगी । मैंने तो पढ़ी है । जो बात किसी ने नहीं कही वह उन्होंने

कही और सब का खण्डन भी किया। ईश्वर, परमेश्वर, ब्रह्म और पारब्रह्म से परे का विचार दिया। मेरे लिए यह नई बात थी और यह बात मेरी समझ में नहीं आती थी। उस समय मैंने प्रण किया था कि मैं सच्चा होकर इस मार्ग पर चलूंगा। और जो मेरा अनुभव होगा वह संसार को बता जाऊंगा इसलिए यह मेरा अपना ही कर्म है जो मैं सत्संग कराता हूं। यह किसी पर कोई उपकार नहीं है और दूसरी बात यह भी है कि हजूर दाता दयाल जी महाराज ने मुझे आदेश दिया था कि फकीर ! चोला छोड़ने से पहले शिक्षा को बदल जाना। मैं अपने आप से पूछता हूं कि तुम संसार को क्या कहना चाहते हो ? जो मेरे साथ बीती वह कहना चाहता हूं। मैं बुरी तरह से इस मन के चक्कर में आया हुआ था। छोटी आयु से मैं राम और कृष्ण की पूजा करता था। उनका रूप मेरे अन्तर प्रकट होता था और जागृत में भी उनका स्वरूप मेरे सामने आता और मैं उन से बातें किया करता था। लेकिन समय ने पलटा खाया और हजूर दाता दयाल महर्षि शिवबृतलाल जी महाराज के चरणों में पहुंच गया। फिर उनका ध्यान करता और उनकी पूजा करता था। मेरे अन्तर में

नये 2 विचार नये नये भाव और नये २ दृष्य आते थे। उनसे कभी मुझे खुशी मिलती थी और कभी मैं चिन्ताग्रस्त हो जाता था। जबसे मुझे लोगों ने यह बताया कि मेरा रूप उनके अन्तर प्रकट होता है। उनके अनेक प्रकार के काम कर जाता है। लेकिन मैं तो होता नहीं और न ही मुझे कोई पता होता है। तो मेरी तो आंख खुल गयी कि सब ब्यक्ति के मन का और उसके विश्वास का खेल है। मुझे विश्वास हो गया कि मेरे अन्तर में भी जो रूप रंग भाव बिचार और शकलें पैदा होती थी या होती हैं, ये असल में हैं नहीं यह सब माया है।

आज थोड़े दिनों की बात है। एक विधवा स्त्री जिसका ६-७ साल का एक लड़का भी है, आ र मुझे कहने लगी कि बाबा जी ! मेरे पिता जी ने मुझे पत्र लिखा है कि उनके नौकर के अन्तर मेरा मृतक पति प्रकट हुआ और कहा कि मेरा लड़का कुशलपूर्वक है और मेरी बन्दूक ठीक है ? वह महिला मुझे कहने लगी कि बाबा जी ! ऐसा न हो कि मेरा पति अधो-गति मैं हो। इसलिए आप उसके वास्ते कुछ करदें। जिस आदमी के अन्तर उसके पति का रूप प्रकट

हुआ पूछ ताछ करने पर पता चला कि उसकी इस महिला के पति से जान पहचान थी। उसको लड़के का भी पता था और बन्दूक का भी पता था। संसार भ्रम में आया हुआ है। स्वपन में जितने भी विचार आते हैं ये बाहर से नहीं आते। आदमी के मस्तिष्क पर जिस प्रकार के संस्कार पड़े हुये होते हैं वही शकलें बनाकर हमारे सामने आते हैं। लेकिन हम मन के चक्कर में आकर पागल बने हुये हैं। मुझे स्वयं इस बात की समझ नहीं थी। 1905 में मेर अन्तर एक दृश्य ही तो आया था और मैं सारा जीवन उसी में रहा। तो में संसार को यह कहना चाहता हूं कि तुम लोग जो इस संसार में बुरी तरह से साँसारिक झगड़ों में और कष्टों में फंसे हुये हो यह सब तुम्हारे अपने ही मन का खेल है। तुम्हारे ही विचार और तुम्हारी ही नीयत का फल है। मन ही के अन्तर सारा संसार बनता है। जब तक कोई आदमी मन को छोड़ेगा नहीं और मन से निकलेगा नहीं, वह मन के चक्कर में ही रहेगा। मन से आगे है सतपद जहां से कि हम आये हैं। जब तक हम अपने अन्तर प्रकाश को नहीं पकड़ेंगे, हम मन के

चक्कर में रहेंगे। यह सन्तों की शिक्षा है। लोग मेरे पास आते हैं और कहते हैं कि बाबा जी ! हमारा यह काम नहीं होता हमारा यह कारोबार नहीं चलता ये सब हमारे जीवन के झगड़े हैं। संसार में जो कुछ भी किसी को मिलता है यह सब हमारे अपने ही कर्म का फल मिलता है। मैं अभी समाधि में था। कहां रहता हूं ? मैं रूप रंग सब छोड़ गया और प्रकाश और शब्द में रहता हूं। जब शारीरिक कष्ट होता है तो यह सब कुछ भूल जाता है। रात खारश के कारण नींद नहीं आयी। मैं यत्न करने पर भी प्रकाश और शब्द में न जा सका। उस समय ज्ञान भी काम नहीं आता था। उस समय सुमरिन से मुझे आराम मिलता था। यह रात का मेरा अगुभव है। इसलिए सन्तोंने जीवों को सुमरिन ध्यान और भजन बताया है। सुमरिन और ध्यान से तुम शरीर के कष्ट से बच सकते हो और भजन से मन के चक्कर से निकल सकते हो। यदि तुम्हारा सुमरिन और अजपाजाप मन से बना हुआ है तो तुम शारीरिक कष्ट को अनुभव नहीं करोगे। इसलिए सन्तों ने दया करके गुरु रूप में प्रकट होकर दुख सुख से बचने के लिये जीवों को सुमरिन

ध्यान और भजन बताया है। रात को जब मुझे कष्ट था तो उस समय ज्ञान भी मेरी कोई सहायता नहीं करता था और यत्न करने पर भी उस समय मेरा प्रकाश और शब्द नहीं खुलता था। उस समय सुमरिन ने मेरी सहायता की। सुमरिन से शरीर की सुद्ध भूल जाती है। ज्ञान से तुम शरीर को नहीं भूल सकते। जब शरीर मन और आत्मा सम अबस्था में आ जाते हैं तो उस अवस्था का नाम सहज समाध है और यह अवस्था ज्ञान के बाद आती है। मैं कुछ और कहना चाहता था। लेकिन क्योंकि तुम ऊंची बात को समझ नहीं सकते। इसलिए मैंने विचार को बदल दिया है। इसलिए मन के साथ सुमरिन किया करो। यदि तुम्हारा सुमरिन बन जाये और तुमको सुमरिन का अभ्यास हो जाये तो दुख के समय भी तुम सुमरिन करके कष्ट से बच सकते हो। ज्ञान तुम्हारी सहायता नहीं करेगा। यह एक नुकता हैं।

शेष रह गया मन के चक्कर से निकलना। मेरा तो यह विचार है कि यदि शरीर ठीक नहीं है तो शरीर से निकलना बहुत कठिन है। शायद कोई और सन्त निकल सकता हो। लेकिन मैं नहीं निकल सकता

हजूर बाबा सावनसिंह जी महाराज भी कष्ट के समय हाय कहा करते थे। किसी सन्त ने अपनी रहनी नहीं बताई । मैं बिना कारण किसी को पंथ में सम्मिलित नहीं करना चाहता । राधास्वामी मत तो भवसागर से पार करने के लिए है। यह आवश्यक नहीं कि तुम राधास्वामी नाम का ही सुमरिन करो। जिस नाम पर तुमको विश्वास है और जिस नाम से तुमको प्यार है, उसका सुमरिन करो अपने मन को इक्ट्ठा करो । राम राम से करो, वाहगुरु से करो, अल्ला अल्ला से करो मगर करो अवश्य। तुम्हारे मन में नाना प्रकार के विचार और आशायें हैं। कोई हानि हो जाती है या कोई मर जाता है तो मन में घबराहट और बेचैनी आ जाती है। उस समय विचार और समझ तुम्हारी सहायता करेंगे कि ऐसा होना ही था। क्योंकि यह हमारे कर्म से या भगवान की इच्छा से ऐसा हुआ है। विपत्ति ने तो आना ही था और यह आयेगी । इस विचार से विपत्ति के समय तुमको अधिक दुख अनुभव नहीं होगा।

ऊपर के शब्दों में लिखा है कि वह मालिक गुरु के रूप में प्रकट हुआ। उसने प्रकट होकर क्या किया?

हमको इस जीवन में दुख सुख से बचने का गुर बताया। इसलिए बाहर के गुरु की महिमा है। तुम्हारी विपत्ति को कोई टाल नहीं सकता, क्योंकि कर्म का फल सबको भोगना पड़ता है। लेकिन गुरु ज्ञान और समझ से दुख कम अनुभव होगा। यह शब्द सुना कि वही सब कुछ है और वह गुरु रूप में प्रकट हुआ। मैं सोचता हूं कि फकीर! तुम अपने आपको समय का सन्त सत्गुरु कहते हो। तुम क्या दे सकते हो? संसार को लूटना चाहते हो? नहीं। गुरु नाम है सच्ची समझ और सच्चे ज्ञान का। यदि तुम समझ जाओ तो तुम्हारा संसार भी और परमार्थ भी दोनों बन जायेंगे। लेकिन एक ही दवाई हर जगह काम नहीं करती। कहीं समझ और विचार काम करते हैं, कहीं सुमरिन काम करता है, कहीं ध्यान काम करता है कहीं प्रकाश लाभदायक सिद्ध होता है और कहीं शब्द तुम्हारी सहायता करेगा। इस वास्ते मैंने यह सारा काम किया है और इसीलिए यह मानवता मंदिर बनाया है। क्योंकि गुरु महाराज की आज्ञा थी कि शिक्षा को बदल जाना, इसलिए मैंने यह काम किया है।

आवागवन से छुटकारा;—मैं बूढ़ा हो गया हूं। सोचता हूं मरने के बाद कहां जाऊंगा। Theory और बात है। मगर अनुमान और अनुभव अवश्य है। मैं दूसरों की कही हुई बात को नहीं मानता। लोग कहते हैं कि मरने के बाद जीव सूक्ष्म शरीर धारण करता है। मैंने एक किताब पड़ी उसमें लिखा हुआ था कि एक आदमी मरने के बाद सूक्ष्म शरीर में आया और उसने अपनी बहुत सी बातें बताईं जोकि ठीक थीं। यह मानना पड़ता है कि कई लोग अपने पिछले जन्म की बातें बताते हैं। हजूर दाता दयाल जी महाराज भी जब चुनार में मुख्याध्यापक थे। उस समय उनका विवाह भी नहीं हुआ था और न ही उस समय वह पंथ में आये थे। एक रात वह अपने कमरे में सोए हुये थे तो आधी रात के समय एक नौजवान सुन्दर स्त्री उनके कमरे में आयी। उन्होंने पूछा कि तू कौन है और क्यों आई है। उसने कहा कि मैं अमुक मुसलमान की स्त्री हूं। मेरी तीन साल की एक लड़की है। मुझे मरे हुये थोड़ा समय ही हुआ है। मेरी लड़की के पेट में कैंचुये हैं। लेकिन मेरा पति उसकी परवाह नहीं करता। आप मेरे पति से

कहें कि वह लड़की की नाभि पर तिलों का तेल डालकर उसको धूप में लटा दे। लड़की को अराम आ जायेगा। दूसरे दिन प्रातः उस आदमी को बुला कर हजूर दाता दयाल जो महाराज ने सारो बात बताई। फिर उस स्त्री के कहने पर अमल करने से वह लड़की स्वस्थ हो गई। इस बात से यह मानना पड़ता है कि जीवन में जिस वस्तु से हमारा लगाव होता है। मरने के बाद भी वह लगाव कायम रहता है।

गुजरांवाला (पाकिस्तान) में एक आर्यसमाजी ने एक मकान किराये पर लिया। उस मकान के बारे यह अफवाह थी कि इसके अन्तर कोई भूत रहता है। कुछ दिनों के बाद उस आर्यसमाजी को मकान के अन्तर किसीके चलने फिरने की आहट मालूम हुई और एक स्त्री उसके सामने आकर खड़ी हो गयी, कहने लगी कि मैं ब्रह्मणी हूं। एक मुसलमान से मेरा प्रेम हो गया था और हम इसी मकान में रहते थे। मैंने उससे विवाह कर लिया लेकिन हिन्दु धर्म को नहीं छोड़ा। मैं जब मरने लगी तो मैंने उससे कहा कि मेरे मृतक शरीर को जलाकर मेरी

हड्डियाँ हरिद्वार गंगा जी में डाल देना। लेकिन वह मुझे दबाना चाहता था। मुसलमानों ने कबरस्तान में मेरे मृतक शरीर को इसलिए दफन करने से रोक दिया कि मैं हिन्दू थी और हिन्दुओं ने शमशान भूमी में इस लिए जलाने नहीं दिया कि मैं मुसलमान थी। अन्त में तंग आकर मेरे पति ने इसी मकान में अमुक स्थान पर दफन कर दिया। तुम उस जगह से मेरी हड्डियों को निकाल कर जला दो और राख आदि हरिद्वार पहूंचा दो ताकि मेरी गति हो जाये। उस आर्यसमाजी ने ऐसा ही किया और उसके बाद वह स्त्री कभी प्रकट नहीं हुई। इसलिए यह ज़रूरी है कि यदि इस संसार में हमारा किसी वस्तु से मोह है और सम्बन्ध है तो मरने के बाद हमारा सूक्षं शरीर उसीके बन्धन में रहेगा और मातलोक के जगत से परे नहीं जायेगा। क्योंकि गुरु आज्ञानुसार शिक्षा को बदलने का मेरा कर्तव्य है। इसलिए मैं यह कहूंगा कि जो आदमी आवागवन के चक्कर से और संसार के दुख सुख से बचना चाहता है और अपनी मुक्ति चाहता है, वह शरीर छोड़ने से पहले संसार की किसी भी वस्तु से अपना सम्बन्ध समाप्त

कर दे। मगर यह तब होगा यदि उसको किसी पूर्णपुरुष के सत्संग से संसार में आने और संसार से जाने का ज्ञान हो चुका होगा। जबतक किसी को यह समझ नहीं है, वह आवागवन से निकल नहीं सकता।

तो गुरु रूप में उस मालिक ने प्रकट होकर क्या बताया ? संसार में सुख से जीवन व्यतीत करने और संसार से निकलने का गुर बताया और इसी का नाम ही नामदान है। में अलग कमरे में किसीको बैठाकर नाम नहीं देता। मेरी वाणी ही नामदान है। आप लोग आये हैं। जवान बच्चे बूढ़े सब अपने मतलब की वस्तु ले जाओ। मैं न ज्ञानी हूं और न ही भाषण दे सकता हूं। लेकिन यह मेरा कर्म भोग है और मैं अपना कर्तव्य पूरा कर जाना चाहता हूं। जिसकी इच्छा करे मेरी बात पर अमल करे, न चाहे न करे। अपने बच्चों के पालन पोषन का ध्यान रखो और उनके स्वस्थ्य का ध्यान रखो। जो लड़के और लड़कियें छोटी आयु में गलत विचार लेकर अपने शारीरक और मानसिक ब्रह्मचर्य को नष्ट कर

देती हैं। उनको दुख और अशान्ति का आना अनिवार्य है । मेरा अनुभव ग़लत नहीं । अपने स्वस्थ्य का घ्यान रखो और विषय विकार को कम करो और विचार से काम लो । किसी पुर्णपुरष का सत्संग करो ताकि बात तुम्हारी समझ में आ जाये और तुम उस पर अमल करके अपने जीवन को सुख से व्यतीत कर सको । संसार में किसी को कोई दुख है और किसी को कोई कष्ट है । अब जिसको धन की कमी के कारण कष्ट है उसको यदि तुम यह कहो कि राम राम जप । तो क्या राम राम जपने से वह सुखी हो जायेगा ? लाहौर (पाकिस्तान) में हज़ूर दाता दयाल जी महाराज के पास एक दिन एक नवयुवक साधू आया । वह मांगता था । उसने हज़ूर दाता दयाल जी महारा‍राज से नामदान के लिए प्रार्थना की । उन्होंने फरमाया कि पहले फीस दो । उसने कहा कि क्या फीस दूं ? हज़ूर ने कहा कि 300/ रुपये । कहने लगा कि महाराज ! मेरे पास रुपये नहीं हैं । में काम करके 300/ रुपये इकट्ठे करके आपको लाकर दूंगा । उसने मांगना छोड़ दिया ।

गेरुये कपड़े उतार दिये और काम करना आरम्भ कर दिया। दो साल के बाद 300/ रुपयेइकट्ठे करके उनके पास आया। रुपये उनकेआगे रखकर मत्था टेका और प्रार्थना की कि अब मुझे नामदान दीजिये। उन्होंनें उसको नामदान दिया और 300/ रुपये उसको वापिस करके कहा कि अब जाओ, घर में रहो। अपना विवाह करो। कमाओ और खाओ और नाम जपो। ये साधु नहीं बल्कि स्वादु हैं। विषय विकार का मारा हुआ एक आदमी मेरे पास आया करता था। उस ने दस बारह वर्ष से अपनी स्त्री को छोड़ रखा था। मेरे पास आया कि बाबा जी! मुझे नाम दान दीजिए। मैंने कहा कि एक हज़ार रुपया लूंगा तब नामदान दूंगा। वह कहने लगा कि दयाल बाग के एक सत्संगी ने मुझसे एक हजार रुपया लिया हुआ है कि मैं तुमको नामदान दिलवा दूंगा। लेकिन अभी तक मुझे नामदान नहीं दिलवाया। मैंने कहा कि वह मुझे पता नहीं है, तुम जानों और वह जाने। वह गया और एक हज़ार रुपया उससे वापिस ले आया। वह मुझे हज़ार रुपया देने लगा। मेंने कहा यह तेरी

कमाई का रुपया नहीं है। स्वयं कमा के लाओ। मैंने उसको ब्रह्मचर्य की शिक्षा दो। यह जितने भक्ति मार्ग वाले लोग होते हैं। इनमें से लग भग 75% वे लोग होते हैं, जिनके ब्रह्मचर्य गिरे हुये होते हैं। यह मेरे जीवन का अनुभव है। कई आदमी आर्थिक कठिनायों के कारण भक्ति मार्ग की ओर आ जाते हैं। मेरा एक मित्र हजूर दाता दयाल जी महाराज के पीछे पतंगे की तरह फिरा करता था। एक दिन मैंने उससे कहा कि तेरा इलाज हज़ूर दाता दयाल जो महाराज के पास नहीं है। मेरी बात को सुन कर वह चकित हो गया और कहने लगा तो फिर आप कर दो। मैंने कहा कि इनके चोला छोड़ने के बाद करूंगा। छः महीने के बाद हजूर दाता दयाल जी महाराज चोला छोड़ गये। और फिर वह मेरे पास आया। मैंने कहा तू महाव्यवचारी है। उसको क्रोध आया और कहने लगा कि आप होश की दवा करो मैं कभी भी दूसरी स्त्री के पास नहीं गया। आप कैसे मुझे व्यवचारी कहते है। मैंने कहा कि।

"छुरी पराई अपनी मारे दरद जो हो"

तुम्हारा विवाह कब हुआ था ? उसने कहा कि

चौदह वर्ष की आयु में। मैंने अपने घर में बहुत विषय भोगा। स्वयं हकीम हूं। दवाई खाता था और विषय भोगता था। मैंने कहा वह जो तुमने अधिक विषय कमाया है वह तुमको अब अशांत कर रहा है। अब तुम जब तक शारीरिक और मानसिक ब्रह्मचर्य नहीं रखोगे, तुमको शाँति नहीं मिलेगी। वह मेरी बात को मान गया। यह मेरे जीवन के अनुभव हैं। यदि संसार में सुखी रहना चाहते हो तो अपने शारीरिक और मानसिक ब्रह्मचर्य को ठोक रखो और अपने मन पर काबू रखो। समय से पहले शादी नहीं होनी चाहिए। मेरा अपना जीवन मेरे सामने है। तेरह साल की आयु में मेरी शादी हो गयी और पन्द्रह साल की आयु में गृहस्थ में फंस गया। फिर मैं भक्त बन गया। बनता कैसे न ? इसलिए अपने अनुभव के आधार पर कह रहा हूं कि यदि संसार में सुखी रहना चाहते हो तो बुद्धि से और विचार से काम लो और अपना ब्रह्मचर्य सम्भालो। मेरा यह भाव नहीं कि तुम गृहस्थ छोड़ दो बल्कि हर एक काम ठीक ढंग और सीमा तक होना चाहिये।

संसार में सुखी रहने का दूसरा उपाय यही है

कि अपने कर्म को ठीक रखो। जो कुछ भी किसी को मिलता है वह उसके अपने प्रालब्ध कर्मों और इस जन्म के कर्मों का फल मिलता है। यदि तुम कर्म को ठीक नहीं करते तो लाख तुम सुमरिन ध्यान करते रहो। कर्म के फल से नहीं बच सकोगे। ईश्वर सृष्टि को पैदा करता है और तुम्हारे अन्तर तुम्हारा वीर्य है। ईश्वर संकल्प से सृष्टि पैंदा करता है ओर तुम्हारे अन्तर तुम्हारा वोर्य भी संतान पैदा करता है। इसलिए ईश्वर का स्थूल रूप तुम्हारे अन्तर वीर्य तुम्हारा है ईश्वर संकल्प से सृष्टि पैदा करता है और हमारा मन भी आशायें करता है और विचार उठाता है। जिससे कि हमारा संसार बनता है। ईश्वर ज्योति स्वरूप है इसलिए अपने ब्रह्मचर्य को ठीक रखना, अपने विचारों को ठीक रखना और अपने अन्तर प्रकाश को प्रकट करना सच्ची ईश्वर भक्ति है। ईश्वर ईश्वर करने से तुम्हारा कल्याण नहीं होगा हां अजपाजाप से कुछ लाभ अवश्य होगा। क्यो कि मेरे जिम्मे कर्तव्य है।

तू तो आया नर देही में, धर फकीर का भेसा।
दुखी जीव को अंग लगाकर, लेजा गुरु का देसा॥

तीन ताप से जीव दुखी है, निबल अबल अज्ञानी।
तेरा काम दया का भाई, नाम दान दे दानी॥
तेरा रूप है अदभुत अचरज तेरी उत्तम देही।
जग कल्यान जगत में आया, परम दयाल स्नेही॥

इसलिए मैं शिक्षा को बदले जा रहा हूं। मैं जो वचन कहता हूं यही मेरा नाम दान है।

गुनानीत गुन सगुन स्वरूपम, अविनाशी राधास्वामी।
निराकार साकार अनूपम, सुखरासी राधास्वामी॥

राधास्वामी मालिक का रूप है। उन्होंने सारे संसार को राधास्वामी कहा है।

दीनानाथ कृपाल दयाला, प्रतिपाला जगदाधारी।
सत्तलोक सतधाम निवासी, सतवासी राधास्वामी॥
विरज विभो मंगल दानी, चेतन घन विमल आनन्द महा।
काम अकाम सकाम प्रकाशी, कैलाशी राधास्वामी॥
रूप रहित आकार रहित मन अमन रहित अदभुत धामी।
नहीं नाम अनाम नहीं नामी, सर्वानामी राधास्वामी॥

उस मालिक में ये सब गुण हैं। यह सब उसी के नाम हैं और उसका कोई रूप नहीं है और सब उसी के रूप हैं।

गुरु रुप में तेरी महिमा है, इस रुप में प्रेम मिले मुझको।
मन बचन कर्म से जपा करूं, राधास्वामी राधास्वामी॥

मैं जब अपने आपको समय का सन्त सत्गुरु कहता हूं तो अपने आपसे पूछता हूं कि क्या तुम अपना कर्तव्य पूरा करते हो ? हां। करता हूं। मगर यह नहीं कहता कि जो कुछ मेरा अनुभव है यही ठीक है। मेरो समझ में यह बात आयी है कि संसार में सुखी रहने के लिए सबसे पहले अपने स्वस्थ्य को ठीक रखो और विषय कम कमाओ। विषय केवल काम का अंग हो नहीं है। विषय कई प्रकार का होता है। अधिक भोजन खा लेना विषय है। आंखों का भी विषय है। कानों का भी विषय है। जब तुम किसो पूर्ण पुरुष के सत्संग में जाकर उसका बात को सुनोगे तब तुमको ज्ञान होगा। स्वामी जी ने अपनी वाणी में लिखा है

दर्शन करे बचन पुनी सुने, सुन सुन कर फिर मन में गुने।
गुन गुन काढ़ लेवे तिस सारा, काढ़ सार तिस करे अहारा ॥
कर अहार पुष्ट हुआ भाई, जग भव भय सब गई गंवाई ॥

यह है गुरु भक्ति। यदि तुम सत्संग में पूरे ध्यान से मेरी ओर देखते हो। मेरी बात को सुनते हो और उस पर विचार करके अमल करते हो तब तुम गुरु सेवक हो अन्यथा नहीं। धन या कपड़े गुरु को देना तो संसार का ब्यवहार है और यह प्रेम के प्रकट करने

का एक ढंग है । प्रेम कुछ मांगता है । सन्त बिना कुछ लिए किसी को अपनाते नहीं । लेना धन धान्य का ही नहीं है । वे जीव को टैस्ट Test करते हैं कि आया यह इस वस्तु के योग्य भी है या कि नहीं । अब तुम लोग यहां पैसे भी देते हो इस से गरीबों की सहायता होती है । कोई बीमार है, उसका इलाज यहां होता है जहां तक हम कर सकते हैं, दुखियों के पालनपोषन का प्रबन्ध हम करते हैं। यहां कई प्रकार की सहायता की जाती है और चन्द एक विधवायों को हर महीने आर्थिक सहायता भेजी जाती है । जिस इच्छा से तुम लोग आये हो वह लाभ तुमको पहुंचेगा । यदि संसार से पार जाना चाहते हो और सदा के लिए आवागवन को समाप्त करना चाहते हो तो उसके लिए गुरु ज्ञान है ।

सावन आया मास दूसरा, सास मरी घर आया ससुरा ।

यह विलकुल सचाई है । सास है शरीर की शक्ति जब आदमी का शरीर कमज़ोर हो जाता है तो मन वलवान हो जाता है । तुम बूढ़ों को देखो । जो कुछ उन्होंने जीवन में किया हुआ है उसका संस्कार मस्तिष्क पर होता है, वही पुराने विचार उनके सामने आ

जाते हैं और वे बोलने लग जाते हैं। मेरी भी यही दशा है। बचपन में मेरे पिता जी ने मुझे लकड़ी का घोड़ा लेकर दिया था। उसकी शकल अब तक मुझे याद हैं और शकल कई बार मेरे सामने आ जाती है। जो जो स्वपन भी मुझे आते रहे वे भी मुझे याद आते रहते हैं। यह मैं अपना अनुभव वर्णन कर रहा हूं।

काली घटा श्याम मन हुआ, श्याम कुंज में यह मन मुआ।

शाम कुंज है मन का बाग। जब शरीर दुर्बल हो जाता है तो पिछला किया हुआ सब सामने आ जाता है अर्थात शाम कुंज खिल जाता है।

गरजे बादल चमके विजली, मनसा मोड़ी आसा वदली।
सुरत निरत की झड़ियां लागीं, धुन आनन्त शब्दन से चाली।
वृद्ध अवस्था चेतन लागी, काल आये जब सिर पर गाजी।
जमपुर से अब सतगुरु राखें, बहुतक जीव मौत दर ताकें॥

जमपुर क्या है ? जम है तुम्हारा मन। मन के संकल्पों से सतगुरु कैसे बचायेगा ? जैसे मैं बचा हुं। जबसे मुझे यह पता लगा कि मेरा रूप लोगों के अन्तर प्रकट होता है। उनके काम कर जाता है और मैं नहीं होता तो मुझे विश्वास हो गया कि मेरे

अन्तर जो कुछ प्रकट होता है यह सब मन का खेल है तो मैं इन खेलों को छोड़कर आगे निकल गया। इसलिए तुम लोग मेरे सच्चे सतगुरु सिद्ध हुये। जाने वाला तुम्हारा अपना ही मन है और मैं मन के रूप को समझ गया गुरु तुम को मन का रूप समझायेगा तब तुम आगे निकल सकोगे। यही एक कुंजी है जिसको कोई गुरु बताता नहीं है। सब अपने जाल में फंसाते हैं और कहते हैं कि तुम्हारे अन्त समय पर गुरु आकर तुमको ले जायेंगे। अन्त समय तुम्हारे सामने जो गुरु का रूप आयेगा वह तो तुम्हारा अपना ही मन होगा और वह जम है। हाँ। यदि अन्त समय पर तुम्हारे इष्ट का रूप तुम्हारे सामने आ जायेगा तो फिर तुम्हारे सामने डरावनी शकलें नहीं आयेंगी और वह रूप तुमको नरककुंड अर्थात बुरे विचारों से बचा देगा फिर तुमको चित्तर-गुप्त अर्थात तुम्हारे कर्मानुसार दूसरा जन्म मिलेगा। यदि अन्त समय इष्ट का रूप आ जाता है तो तुमको अच्छी योनी मिलेगी, यह नहीं कि तुम पार हो जाओगे। यही बात पवित्र विभूति राय सालिगराम साहिब जी महाराज ने अपनी प्रेम वानी में लिखी है कि अन्त समय पर फिल्म चलती है। ज़िस गुरु से

नाम लिया हुआ होता है वह भी आ जाता है। फिर सूक्षं शरीर कुछ समय के लिए ऊपर के लोकों में रहता है। वहां सत्संग भी मिलता रहता है। फिर जब कोई समय का सन्त सत्गुरु इस संसार में आता है तो वह जीव भी इस संसार में जन्म लेता है और उस समय के सन्त सत्गुरु के सम्पर्क में आकर अपनी शेष की कमाई पूरी करके वापिस अपने घर चला जाता है। बाकी की कमाई क्या है? यह विश्वास हो जाना कि हमारे अन्तर जो कुछ भी फुरनायें होती हैं। ये असल में हैं नहीं। यह सब माया है। तो जमपुर से ऐसे सत्गुर बचाता है। जो कुछ मैंने समझा है वह संसार को बताता रहता हूं। आगे क्या होगा? नथ खसम दे हथ। जो उसकी मौज होगी वह होगा। यह बात मेरी समझ में आयी है और यही मैं आप लोगों को वता रहा हूं।

काली घटा जब छाकर आई, धारा मौत अधिक बरसाई।
जीव अनेक रहे घबराई, काया गढ़ उन दीन्ह ढवाई॥
जमपुर जावें जीव पछतावें, जम के भूत तिन बहुत सतावे॥

जम राज क्या है? हमारे गंदे विचारों के कारण हमारे स्वप्न में हमको भयानक दृष्य दिखाई पढ़ते हैं

और उनको देखकर हमको डर लगता है। ऐसे ही अन्त समय पर जब जीव के सामने उसके जोवन के के बुरे कर्मों की फिलम चलती है और बुरे २ दृष्य उसके सामने आते हैं तो वह उनको देखकर डरता है, घवराता है और चिल्लाता है वही जमराज है और वही नरक है और जब कोई अच्छा दृष्य उसके सामने आता है तो वह खुश होता है। उसी का नाम स्वर्ग है। इस ज्ञान के बिना जीव धक्के खा रहें हैं।

नाना कष्ट दे पल पल में, फिर फांसी डालें गल गल में।
कभी नर्क माहिं दे गोते, जीव सहें दुख अतिकर रोते।
वे निरदई दया नाहिं लावें, अति तिरास से जीव मुरझावें॥

यह निरदई कैसे हैं ? मैंने महकमा रेल में काम किया है । वह जो मैंने अपने निजी स्वार्थ के लिये काम किया है। वे संस्कार अब तक भी मेरे मस्तिष्क में मौजूद हैं और मुझे छोड़ते नहीं है। मैं उनको छोड़ना चाहता हूं, मगर वे मुझे नहीं छोड़ते । इसका नाम है निरदई। यदि तुमने किसी के साथ धोखा या फरेब किया हुआ है तो वे संस्कार तुम्हारे मस्तिष्क से जायेंगे नहीं। क्योंकि संस्कार नष्ट नहीं होते। इस-लिए इनको निरदई कहा गया है। जब तक तुम स्वस्थ

हो और शरीर में शक्ति है तब तक ये संस्कार बहुत कम तुम्हारे सामने आयेंगे। मगर जब दुर्वल हो जाओगे। यह सब के सब तुम्हारे सामने आयेंगे मैं 89 साल का हो गया हूं। जो जो कर्म मैंने किये हुये हैं या जो जो स्वप्न मैंने देखे हुये हैं। वे अब तक भी मुझे नहीं छोड़ते। इसलिए शास्त्र कहते हैं कि मन बचन और कर्म से शुद्ध रहो। मैंने कितनी सच्चाई से जीवन व्यतीत किया है। मगर यह संस्कार अभी तक भी मुझे नहीं छोड़ते। मुझे क्या, किसी को भी नहीं छोड़ते।

अगिन खंभ से फिर लिपटावें। हाय हाय कर तब चिल्लावें।
सुने न कोई मुशकिल भारी, सर्पन माला ले गल डारी।
मार मार चहूं दिस से होई, पति गति अपनी सव विधि खोई
नर्कन में अति त्रास दिखावें, फिर चौरासी ले पहुंचावें ।।
गुरु भक्ति बिन यह गति पाई, नर देही सब बाद गंवाई।

गुरु भक्ति क्या है ? रुपये देना या कपड़े देना गुरु भक्ति नहीं है अन्यथा हर एक धनी इसको प्राप्त कर लेता। यह तो संसार का व्यवहार है। जो दोगे वह मिलेगा। सत्संग से बात को समझकर मन को छोड़ना ही गुर भक्ति है और प्रकाश और शब्द को पकड़ना और उनकी कमाई करना नाम भक्ति है।

यदि अन्त समय पर तुमको प्रकाश और शब्द नहीं आता तो तुम यमराज के चक्कर से बच नहीं सकत

जो जो भजन से चूके। तिन के मुख जम पल पल थूके।
ऐसी कुगत होऐगी सबकी, जो नहिं धारें सतगुरु अबकि ॥

संसार ने यह समझा हुआ है कि नाम ले लो और तुम यमराज से बच जाओगे। यह बात बिलकुल गलत है। मैं यदि सच्चाई वर्णन नहीं करता और तुमसे पैसा लेता हूं तो वह पैसा मुझे खा जायेगा। यद्यपि पैसे की यहां मंदिर में भी आवश्यकता है। लेकिन किसी को अज्ञान में रखकर या किसी की आँखों में मिट्टी डालकर मैं नहीं लेना चाहता।

सतगुरु बिना कोई नहिं बाचे, नाम बिना चौरासी नाचें।

सतगुरु है सच्चा ज्ञान। बाबा फकीर या हजूर बाबा सावनसिंह जी महाराज सत्गुरु नहीं हैं। उनकी वाणी सत्गुर है।

धन्य भाग हम सतगुरु पाया: चढ़ी सुरत मन गगन समाया।

सत्गुर तुम्हारे अन्तर चौथे पद में है।

नाम रहे चौथे पद माहिं, यह ढूडें तिरलोकी माहिं।

सत्गुरु कब मिलेगा ? जब तुम शरीर मन और

प्रकाश से आगे जाओगे ।

सुन्न मंडल जाय झूला झूली, सावन मास लिया फल मूली ।
सखियां सब मिल गावन लागीं, माया ममता देखत भागीं ॥

जब तक तुम्हारी माया, ममता, बुद्धि और मैंपना नहीं जायेगा छुटकारा नहीं होगा । कल एक आदमी का पत्र आया । वह लिखता है कि मेरे कोई बच्चा नहीं था । मैंने किसी से एक बच्चा लेकर पाला । बड़ा हो गया । अब नौ साल हो गये उसका विवाह किये हुये, उसके कोई बच्चा नहीं है । वह लिखता है कि बाबा जी ! मैं पोता देखना चाहता हूं । मैंने उस को उत्तर दिया कि जैसा ख्याल वैसा हाल । इस बुढ़ापे में भी तुम बच्चों और पोतों के मोह में फंसे होये हो । इसलिए तुमको और जन्म मिलेगा । इसी वास्ते मैं बूढ़ों से कहता हूं कि अपने मन को संसार से हटाओ । लेकिन जवानों के लिए और शिक्षा है और बच्चों के लिए और शिक्षा है ।

सभी सुहागिन झूलें घर घर, पिया अपने को हिरदे घर घर ।

पिया कौन है ? शरीर का पिया गुरु है, मन का पिया गुरु स्वरूप है और सुरत का पिया शब्द है ।

पिया विमुख तरसे बहु नारी । जिनके पति परदेस सिधारी ।

जो यह समझता है कि मेरा गुरु ब्यास में रहता है, होशियारपुर में रहता है या और किसी स्थान पर रहता है वह तो पिया को प्रदेश में समझता है। इसलिए गुर को सदा अपने पास समझो। लेना देना तो कर्म भोग हैं। मगर यदि मैं सच्ची बात नहीं बताता और तुमको अपने जाल में फंसाता हूं तो मैं कहां जाऊंगा।

तिन को सावन काला लागा, डस डस खावे लागे आगा।

जिसको यह भेद नहीं मिला और वह गुरु को अपने से दूसरा समझता है। उसके लिए वह काला नाग है। अर्थात उसको डर लगता है। देखो! जो संसार से डरता है वह पापी है। जो संसार में शोक रहित रहता है वह पुन्यआत्मा है। पाप का फल दुख है। जो गुरु के वियोग में रोता है वह भी दुखी है और यह दुख भी उसके किसी पाप का ही फल है। इसलिए किसी पूर्ण गुरु के सत्संग में जाओ। मैं चाहता हूं कि तुमको असलीयत की समझ आ जाये और मेरे बाद तुमको किसी दूसरी जगह न जाना पड़े। खुशी का जीवन व्यतीत करो।

देखो ! राम, कृष्ण, गुरु या अपने इष्ट के प्रेम में जो रोते हैं। असल में उनके अन्तर में कोई निर्बलता होती है और उनका यह अस्थायी रोना इस निर्बलता को पूरा करता है। सन्तों ने जीवों को उत्साह देने के लिए जो कामी आदमी थे उनको भक्त कह दिया। जिनके मस्तिष्क हिले हुये थे ज्ञानी कह दिया और जो अपने अन्तर में आनन्द लेना चाहते थे उनको योगी कह दिया। एक स्थूल शरीर का आनन्द है, एक सूक्ष्म शरीर का आनन्द है और एक कारण शरीर का आनन्द है। योगी आनन्द के लिए योग करता है, गृहस्थी आनन्द के लिए स्त्री से विषय कमाता है और हम आनन्द के लिए सुरत चढ़ाते हैं। तो आनन्द की इच्छा ही तो काम है। जिस आदमी को इस भेद का पता लग जाता है वह अपने रूप में चला जाता है और फिर वह कामी नहीं रहता दूसरे शब्दों में न वह योगी रहता है और ज्ञानी रहता है। वह शान्ति चित रहता है और यह शान्ति लक्ष्यपद है। सन्तों ने जीवों को उभारा है, उत्साह दिया है और दया की है। इस वास्ते स्वामी जी महाराज ने लिखा हैं।

भक्त उपासक योगी ज्ञानी इन सब चक्कर खाया।
बाहर वर्षा रिम झिम होई, घट में उनके अग्नि समोई ।।
अग्नि लग्नि मानो तन मन फूका, उनके भावें पड़ गया सूखा

जिसने बाबे फकीर को ही गुरु माना हुआ है। उसको समझ नहीं है। मुझे भी इसको समझने में बहुत समय लगा है। इस को समझने में समय लगता है और यह सच्चाई है।

कुछ करनी कुछ कर्मगत, कुछ पुरवले लेख।
देखो भाग फकीर के लख से भया अलेख ।।

बात को समझो और खुश रहा करो। हाय हाय करने से कुछ नहीं बनता। कर्म तो भोगना ही पड़ेगा। मैं स्वयं रोता था। क्योंकि मेरा छोटी आयु का विवाह था कुछ तो यह पाप था, कुछ गरीबी थी और कुछ बाप का स्वभाव बहुत सख्त था। जब हम बसरे बगदाद में थे तो पण्डित पुर्षोत्तम दास नें हजूर दाता दयाल जी महाराज को पत्र लिखा कि जैसा प्रेम फकीर चन्द जी को प्रदान किया है ऐसा प्रेम हमको भी प्रदान किया जावे तो उन्होंने उत्तर दिया कि जिसके कर्म में रोना है वह रोये तुम क्यों ऐसी इच्छा करते हो। इसलिए में आप लोगों से कहा करता हूं कि अपना शारीरिक और मानसिक ब्रह्मचर्य ठीक रखो अन्यथा मेरी तरह तुमको भी रोना पड़ेगा।

तीज त्योहार कछु नहिं आवे, मन में दुख नहि हर्ष समावें।
पिया विन सावन कैसा आया, जेठ तपन जस जीव जलाया।

जो हर समय कल्पना करता रहता है वह दुखी और बिना ज्ञान के वह सुखी नहीं रह सकता।

जीव जले विरह अग्नि में, क्योंकर सीतल होय।
बिन वर्षा पिया बचन के, गई तरावत खोय॥

असली पिया शब्द है और दूसरा ये वचन हैं जो मैं कह रहा हूं। पक्को शान्ति तो साधन करने से मिलती है। मगर सत्संग करने से भी जीवों को शान्ति मिलनी चाहिए। यदि मेरे पास आने वालों को शान्ति नहीं मिलती तो यह मेरा दोष है। उनका नहीं है।

जिन को कंथ मिलाप है तिन मुख बरसत नीर।
घट सीतल हिरदा सुखी वाजे अनहद तूर॥

निरभ्रान्त रहना और अडोल रहना ही लक्षपद है जिसके मन में शान्ति है, चिन्ता फिकर नहीं है चिन्ता रहित है और कोई भ्रम नहीं है वही सन्त है। हमनें इस अवस्था को प्राप्त करना है। जिसको यह प्राप्त है उसको अभ्यास करने की कोई आवश्यकता नहीं है। यहो तो लक्षपद है। लेकिन हमारे मस्तिष्क

में धर्म, पंथ, नरक और स्वर्ग के भ्रम हैं । ये सत्संग से जाते हैं । मैं ज्ञानी नहीं हूं और न ही कोई भाषन दे सकता हूं फिर भी जहां तक मुझ से हो सका, मैंने आपको समझाने का यत्न किया है । अब इसके बारे हजूर दाता दयाल का शब्द सुनो ।

जिसके मन नहीं चिन्ता व्यापे, जग में वही है दास फकीर ।
अभय रहे चित गुरु पद राखे, धीर वीर गम्भीर ॥
शांत भाव व्योहार परमार्थ, कभी न हो दिलगीर ।
अपनी पीर न उरमें साले, लखे पराई पीर ॥
पर की पीर न जिसे सतावे, सो अधर्म बे पीर ।
अपना रूप सम्भाले पल पल काट मोह जंजीर ।
यह फकीर है गुरु को प्यारा, महावीर चित धीर ॥
चाह गई चिन्ता सब भागी, आया भव निधि तीर ।
हंस रूप धर त्याग नीर को, गह लिया ज्ञान का शीर ।
राधास्वामी गुरु का सच्चा बालक, पहर विराग का चीर ।
तन के रहते मुक्त विदेही, सहे न द्वन्द शरीर ॥

"सब का राधास्वामी"

गुरु अवश्य

लेखक :—सेठ दुर्गादास साहिब चण्डीगढ़

एक सज्जन का पत्र आया। उसने पूछा है कि मैं परमार्थ के लिए गुरु की तलाश में हूं। गुरु बनाना चाहता हूं और मुझसे पूछता है कि मैं किस को गुरु करूं। इस सज्जन ने प्रश्न सीधा कर दिया। इसका उत्तर देना बड़ा कठिन काम है। हर एक की निष्ठा अलग अलग होती है। किसी का विश्वास किसी जगह बैठ जाता है, किसी का किसी जगह। विवाह के समय कोई किसी की सलाह नहीं लेता, जो मन पसन्द हो, उससे विवाह कर लेता है और उसके साथ जीवन व्यतीत कर देता है, भली हो, नेक हो, जैसी हो। जिस प्रकार स्त्री इस जगत में मिल जाती है। गुरु भी इसी प्रकार मिल जाया करता हैं। चाह होनी चाहिए। इच्छा प्रबल होनी चाहिए। फिर देखो गुरु कैसे मिल जाता है। इसलिए यह विषय "गुरु अवश्य" लिख रहा हूं। यह एक बहुत असाधारण विषय है। गुरु की क्या आवश्यकता हैक्या ?

परमार्थ के लिए गुरु का होना अनिवार्य है। ईश्वर का भजन किया जा सकता है। ईश्वर की बन्दगी की जा सकती है। ईश्वर के नाम का सुमरिन हो सकता है। ईश्वर की भक्ति के लिए फिर मध्यस्थ की क्या आवश्यकता है। सीधे ईश्वर को मिल लो। ईश्वर के दर्शन कर लो।

नहीं, नहीं। संसार के हर काम के लिए मार्ग दर्शक की आवश्यकता है। सुनार को सोने का काम सीखने के लिए गुरु की आवश्यकता है, लुहार, तरखान, दर्जी, इन्जीनियर, ड्राईवर, पायलट और डाक्टर सब अपने २ सहायक से काम सीखते हैं। स्कूल में हर प्रकार की विद्या सीखने के लिये अलग अलग अध्यापक की आवश्यकता है। गाना, बजाना और नाचना बिना मास्टर के नहीं सीखा जाता है। जब संसार के पदार्थों को जानने के लिए, भौतिक ज्ञान प्राप्त करने के लिए गुरु की आवश्यकता है तो फिर परमार्थ के लिए पथदर्शक की क्यों आवश्यकता न पड़ेगी।

मालिक ने पांच कर्म इन्द्रियां, पांच ज्ञान इन्द्रियाँ और सूक्षं ईन्द्रियाँ, मन, बुद्ध, चित और

अहंकार जीव को दे रखे हैं। जीव पूर्ण है। इन इन्द्रियों के द्वारा यह संसार के सब काम कर सकता है। जीव में हर प्रकार की योग्यता और पूर्णता भरी पड़ी है। हर एक प्रकार का गुण और हर प्रकार की विद्या जीव के अन्तर भरपूर है। जीव के अन्तर संसार है, परमार्थ है, प्रकाश है, शब्द है। सर्वाधार स्वयं विधमान है। लेकित शिथल हैं। छुपी पड़ो हैं। इनको जगाने, उठाने, उभारने की आवश्यकता है। इन शक्तियों को जगाने वाला चाहिए। जगाने वाले का नाम उस्ताद, टीचर और गुरू है।

बच्चों को समझाया कि दो और दो चार होते हैं। बच्चों ने कहा वहुत अच्छा। अब यह दो और दो चार जब आवश्यकता पड़े, कर लेता है। यह योग्यता बच्चे में पहले ही मौजूद थी। केवल इस योग्यता को जागृत कर दिया गया। बाहर से जीव कोई वस्तु नहीं लेता है। बाहर से केवल संस्कार लेता है। सहायता लेता है। शक्ति जीव के अपने अन्तर है जीव के अन्तर जो गुरु मौजूद है। इसको जगाना है। इसलिए गुरु की आवश्यकता है। माता भी गुरु का काम करती है। पित भी गुरु का काम करता है।

शरोर रोगी है । तो शरोर का इलाज किसी डाक्टर से कराया जायेगा । लेकिन आपने कभी किसी योग्य डाक्टर की जानकारी से नुसखा लेकर अपने बेटे का इलाज नहीं किया । संसार में बड़े 2 योग्य डाक्टर हो चुके हैं । जिन्होंने हज़ारहा किताबें बीमारीयों, दवाईयों और नुसखों पर लिखीं । लेकिन आप इससे लाभ नहीं उठाते । लेकिन आप अपने बेटे का इलाज किसी जीकित डाक्टर से करवाते हो । क्यों ?

इसी प्रकार जिस किसी को मानसिक बीमारी है इसका इलाज कोई जीवित, साधन सम्पन्न साधु ही कर सकता है । जिसको शान्ति की तड़प है । जिसकी सुरत अशान्त रहती है । इसका इलाज कोई सत्गुरु ही कर सकता है । इसलिए ऐ जीव ! जीवित सत्गुरु करना एक परमार्थी, मतलाशी के लिए आवश्यक है । स्वामी जी महाराज फरमाते हैं ।

सतगुरु खोजो री, जग में दुर्लभ रतन यही ।

फरमाते हैं गुरु को ढूंडो, गुरु की खोज करो । क्यों तलाश करो । तलाश तो उस वस्तु की की जाती है जो मिलती नहीं है या मिलनी कठिन है । या जो वस्तु गुम हो चुकी है । वह कहते हैं यह अमूल्य रत्न

है, प्रकृति को दात है। सच्चे शब्द स्नेही गुरु का मिलना कठिन है। इसलिए फरमाते हैं, इस दुर्लभ रत्न की तलाश करो। परिश्रम से यह रत्न मिलेगा या जिसके भाग्य में हो। जिसने पिछले जन्मों में शुभ कर्म किये हों। शुभ, नेक और अच्छे कर्मों का फल गुरु का दर्शन है।

शब्द गुरु को कीजिए बहुते गुरु लवार।
अपने अपने स्वाद को ठौर ठौर बट मार।

कौन ढूंडे, कौन तलाश करे। वह तलाश करे जिसको आवश्यकता हो। उदाहरण है, मान लो कि चोर को पता लग जाये कि साथ के कमरे में सोने का भण्डार है और बीच की दिवार कच्ची है। चोर क्या करेगा। जब किसी को विश्वास हो जाये कि गुरु के मिलाप से जन्म मरण का कष्ट दूर हो जायेगा। आवागवन समाप्त हो जायेगा। सुख, आनन्द, और शान्ति मिलेगी तो वह क्यों नहीं सतगुरु की तलाश करेगा। लेकिन हर एक जीव को सतगुरु की इच्छा नहीं है।

गुरु की तलाश कौन करेगा। मुतलाशी खोजी कैसा होना चाहिए। फरमाते हैं।

कोमल चित दया मन धारो, फिर गुरु की खोज लगाना।

यदि आप का चित कोमल है जैसे फूल कोमल होता है। थोड़ी सी गर्मी लगने ले कुमला जाता है। क्या खोजी का दिल किसी को दुखी देखकर कुमला जाता है। वह दुखो हो जाता है। क्या इसके दिल में दया आती है ? ऐसे खोजी को गुरु की तलाश करनी चाहिए।

कबीर साहिब फरमाते हैं।

दया राख धर्म को पाले, जग से रहे उदासी।
अपना सा जिव सब को जाने, ताहे मिसे गुरु अभिनाशी
बिषयों से जो होय उदासा, परमार्थ की जा मन आसा।
धन संतान प्रीत नहीं जाके, जगत पदार्थ चाह नहीं ताके
मन इन्द्री आसक्त न होई, नींद भूख आलस जिन खोई,
विरह वाण जिन हृदय लागा, खोजत फिर साध गुरु जागा॥

अब प्रश्न है। गुरु कौन हो सकता है और गुरु क्या करता है। कितने गुरु होने चाहिये। इनके उत्तर एक खोजी चाहता है ताकि उसकी संतुष्टी हो और और वह ठोक मार्ग अपनाये।

गुरु कीजिए पहचानकर, पानी पीजिए छानकर।

गुरु को करने से पहले इसकी जांच पड़ताल करनी चाहिए। जब एक मामूली बर्तन ठोक बजाकर

मोल लेते हैं, फिर गुरु की जांच क्यों न की जाये। यह एक साधारण बात नहीं है गुरु ने आपके जीवन को सुधारना है। आप के जीवन के साथ खलना है। तुम्हारे विचारों के साथ खेल करना है। इसलिए ऐ जीव बहुत होशियार होकर पांव उठाना, सम्भलकर, फिसल न जाना। धोखे में न आ जाना। सुनो ? स्वामी जी महाराज़ फरमाते हैं।

1. गुरु का निरख आंख और माथा।
   सत का नूर रहे जिन साथा॥
2. घर में घर दिखलाये दे, सो गुरु चतुर सुजान।
   पांच शब्द धन्तकार धुन, बाजे शब्द निशान॥
   गुरु को कीजिए दण्डवत, कोटि कोटि प्रणाम।
   कीट न जाने भृगीं को, गुरु करलें आप सम्मान॥

सतगुरु के प्रताप से, मिट गया सुख दुख द्वन्द।

गुरु सोई जो शब्द स्नेही, छब्द विना दूसर न सेही।
शब्द स्वरुपी शब्द अभ्यासी, अस गुरु मिले तो पार हुआ।

गुरु के सुन्दर चेहरे पर प्रकाश हो, आंखों में नूर हो अंगहीन न हो; चेहरा सुन्दर हो, शरीर सुडौल हो जीवनमुक्त अवस्था हो, शारीरिक दुख से ऊपर निवास हो, दोष रहित हो, रहनी हो, ऐसा गुरु करना चाहिए।

फरमाते हैं :—

शब्द सुरत विन जो गुरु होई।
ता को छोड़ो पाप कटा।

शब्द सुरत का अभ्यासी हो।

अब प्रश्न है कि गुरु क्या करता। यह पहले वर्णन कर दिया गया है। गुरु अपनें समान कर लेता है। आज़ाद कर देता है। सर्वाधार के दर्शन अन्तर करा देता है। शान्ति दिलाता है। अगम का भेद देता है। भ्रम मिटा देता है। विरह का मरभ बताता है। भटकन समाप्त हो जाती। जन्म मरण का डर दूर हो जाता है। भक्ति का चोला पहना देता है।

जीवन में गुरु परमार्थी का एक होना चाहिए। श्रद्धा विश्वास और निष्ठा एक होती है। कंवारी लड़की का विवाह एक बार ही हुआ करता है। हां ! यदि ऐसी लड़की का पति मर जाये और इसने अभी अपने पति के दर्शन नहीं किये हो तो वह लड़की अभी कवांरी ही समझी जायेगी।

यदि अभी श्रद्धा पैदा नहीं हुई, विश्वास हुआ नहीं, गुरु मूर्ति प्रकट नसीं हुई तो निष्ठा कैसे बनेगी।

जब श्रद्धा उत्पन हो जाये, विश्वास हो जाये, निष्ठा हो जाये तो गुरु से खूब प्रेम करना चाहिए। एक जान तो कालब हो जाओ।

जैसे प्रीत कुटुम्ब की, तैसी गुरु से होय।
कहें कबीर ता दास का, पल्ला न पकड़े कोय।

उसकी हर प्रकार को सेवाकरे। सेवा में उपस्थित रहे। दर्शन करे, बचन सुने, फल फूल भेंट देवे, भक्ति करे। भक्ति से गुरु को खुश करे। संसार में सवाय गुरु के दूसरा न आवे।

भक्ति देहेली गुरु की, नहों कायर का कायम।
सीस उतारे हाथ सों, ताहीं मिले सतनाम।

यह जीतेजी मरना है। मन को गुरु के अर्पण करदे। गुरु प्रायण हो जाए। गुरु मत में सम्मालित हो जाये।

मन मता न रहे।
मन के मते न चलिए मन के मते अनेक।
जो मन पर सवार हैं, वह साधू कोई एक।

जो गुरु की इच्छा हो, वही इच्छा अपनी बना लो। गुरु को परमपद, सर्वाधार का अवतार समझो यदि धुरपद की इच्छा हो।

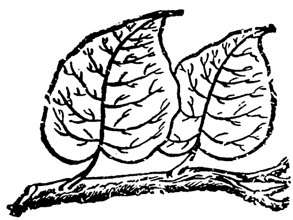

पत्र व्यवहार द्वारा ज्ञान

पत्र नं १

प्यारी बहन, राधास्वामी !

पत्र मिला, अगर मौका मिले तो तुम और तुम्हारे पति मेरे पास यहां कुछ दिन रहो ताकि संगन के प्रभाव से आपकी प्रकृित में तबदोली आए। सतसंगियों ने अभ्यास के राज़ को नहीं समझा। मैंने भी पहले नहीं समझा था। अभ्यास अभि और आस मिलाकर संस्कृत का लफ्ज बना है-अभि का मतलब पहले और आस का मतलब होने से है। जो चीज़ हमारे पास पहले ही है यानि जैसी प्रकृति शारीरिक मानसिक व आत्मिक मौज ने पहले बनाई है-उस प्रकृित के खेल में खुश रहना समता में रहना बेग़मी बेफिकरी में रहना ही अभ्यास है।

जिस किसम की प्रकृति उस आदमी को पिछले जन्मों के संस्कारों तथा इस जन्म के संस्कारों के कारण है वैसे ही उसके शारीरिक, मानसिक व आत्मिक एहसास होंगे। मैं इस उमर में यह कहने का हौसला करता हूं कि हर एक जीव अपनी प्रकृति के

अनुसार सोचने, समझने और काम करने को विवश है इसलिए हर हालत में खुश रहना बेगम रहना बेचित रहना ही अभ्यास का मंजिले मकसूद है।

यह खत अपने पति को बता देना। जिस तरह बच्चा स्वाभाविक तौर पर आपने आप में प्रसन्न रहता है इसी तरह जीवन को गुजारना ही संतपना है- मगर बाहर के प्रभाव, मज़हब व पंथों ने ऐसे भ्रम व ख्याल हमारे दिमाग में भरे हैं कि इस अवस्था में रहा नहीं जाता। इस लिये सत्संग व साधन कराया जाता है ताकि जीव को अनुभव हो जाय। सत्संग कराने वाला पूर्ण पुरुष होना चाहिए जो खुद साधन, अभ्यास, गुरु, ईश्वर परमेश्वर रसम रिवाज का कैदी न हो। समझ सकें तो मेरी बात समझलो नहीं तो कुछ दिन सत्संग करो।

आपका फकीर।

पत्र नं २

प्यारी बेटी ! राधास्वामी

तुम क्या चाहती हो यह तो लिखा नहीं । आगे बढ़ने से तुम्हारा क्या मतलब है ?

मैं आगे बढ़ने का मतलब समझता हूं-अन्तर में खुशी प्रसन्नता, मस्ती आनन्द और शान्ति का प्राप्त होना खुशी, आनन्द मस्ती तो मनकी एकाग्रतासे आती है और शांति अनुभव व ज्ञान से आती है । मनको एकाग्र करने के लिए अजपा जाप और शुरू स्वरूप का ध्यान है। ध्यान से भी तब लाभ होगा जब तुम्हें उस रूप से घनिष्ट प्रेम होगा । यदि प्रेम नहीं है तो ध्यान से भी उतनी खुशी नहीं मिलती है ।

बैठ कर साधन नहीं कर सकती तो लेट कर किया करो । मैं तो साधन सच्चा विश्वास और प्रेम को समझता हूं स्त्री और पति का सच्चा प्रेम है उसे उसे सुख हैं आनन्द है, वह उस सुख और प्रेम को पाने के लिये अभ्यास में तो नहीं बैठती । यह दिल की लगन है। सदगुरु या मालिक हर समय हर आदमी के अन्तर में रहता है ।

बेटी ! मैं सच्चे दिल से चाहता हूं कि तुम्हें खुशी और आनन्द मिले—शान्ति का दर्जा अभी दूर है । आनन्द की हद हो जाती है तव शान्ति मिलती है । गृहस्थन हो मेरा इशारा समझो ,

आप का फकीर ।

पत्र नं ३

भारत माता ! इन्दिरा गांधी के रूप में,

में सच्चे दिल से भारत माता के चरणों में नमस्कार करता हूं। होश आई, दुनियां देखी, उसके बनाने वाले का ख्याल आया। अब मेरी उमर 89 बरस की है। उस मालिक की तलाश में हूं। मालिक या ईश्वर एक नियम है, एक कानून है और वह कानून है वासना का। यह संसार वासना का रूप है।

मैंने पैंतालीस मिनिट तक 11-11-75 को रेडियो पर भाषण सुना था। उस भाषण के सार को समझ कर ख्याल आया कि जिस वजूद से यह भाषण निकला है और जिस ताकत ने यह भाषण दिलाया वह सच्चा प्रेम रखने वाला और हितैशी है, वह भारतवर्ष का हमदर्द है। इसलिये मैं उस भाषण देने वाली रूह को और भाषण देने वाले सैंटर को भारत माता कह कर नमस्कार करता हूं।

इस कुदरत के कानून को किसी हद तक मैंने समझा है। उस कानून को समझाने के विचार से क्योंकि मेरे जिम्मे मेरे परम पूज्य सदगुर महर्षि शिवब्रतलाल जी महाराज ने जगत कल्याण का काम दिया था, वे एक स्थान पर मेरे लिये लिखते हैं।

तेरा रूप है अदभुत्त अचरज तेरी उत्तम देही ।
जग कल्याण जगत में आया परमदयाल स्नेही ॥

उस धर्म को निभाने के लिये मेंने इन्सान बनो की आवाज उठाई थी और मानवता मंदिर (होशियारपुर पंजाब) यहां स्थापित किया । जिस तरह नियमवद्ध होकर मौजूदा विज्ञान अच्छी नसलों की फसलें, अच्छी नसलों के जानवर आदि बनाने की कोशिश कर रहा है, इसी तरह जब तक मानव जाति को यह पता नहीं कि संसार में अच्छे इन्सान कैसे पैदा किये जा सकते हैं, देश का भला नहीं हो सकता । मेरी समझ में यह आता है कि इस वक्त संसार में खुदरौ दरखतों की तरह खुदरौ इन्सान पैदा हो रहे है । तुख्म की तासीर और सोहबत का असर कभी ज़ाया नहीं जाता । इस वास्ते जो फर्ज मुझपर लगाया गया है, मैं यह कह देना चाहता हूं कि जब तक स्त्रीयों और पुरुषों को यह ख्याल नहीं दिया जाता कि कैसे औलाद पैदा की जाये, मानव की जिन्दगी कन्ट्रोल में नहीं रह सकती ।

मैं यह मानता हूं कि राष्ट्र को बनाने वाली धर्म और सरकार है । मगर मेरी तुच्छ बुद्धि में राष्ट्र को